आंदोलन की दिशा

'जंतर मंतर 2.0' आंदोलन से ऐन पहले जिस तरह कांकरोच जनता पार्टी के कर्ता-धर्ताओं को जहां-तहां से हिरासत में लिया गया, उसी से यह साफ हो गया था कि दिल्ली पुलिस इस बार कोई ढिलाई बरतने के मूड में नहीं है। उसने न सिर्फ तमाम एहतियाती उपाय किए, बल्कि हजारों प्रदर्शनकारियों को आंदोलन-स्थल पर पहुंचने से पहले ही हिरासत में ले लिया। इसलिए रविवार का दिन अपेक्षाकृत शांत रहा, लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली पुलिस की इस सख्ती पर जिस तरह की टिप्पणी की, उसके गहरे निहितार्थ हैं। गौरतलब है, शनिवार के आंदोलन को देखते हुए कई मेट्रो स्टेशन शुक्रवार रात से ही बंद कर दिए गए थे और नई दिल्ली व हजरत निजामुद्दीन रेलवे स्टेशनों पर आने-जाने वाली दर्जनों रेलगाड़ियों को रद्द कर दिया गया था। शीर्ष अदालत ने साफ किया कि कानून के मुताबिक शहर में लोगों की आवाजाही सुचारू रूप से होनी चाहिए और केवल कानून के अनुसार ही गिरफ्तारी की जा सकती है। उसने यह भी स्पष्ट कहा कि जहां भारतीय नागरिक सुरक्षा संहिता की धारा 163 लागू नहीं है, वहां ऐसी हिरासत से बचा जाए।

इसका अर्थ है कि प्रशासन को ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए कि नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों का हनन न हो, साथ ही कानून का राज भी बना रहे। यह इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि आंदोलन की आड़ में अराजक तत्व सक्रिय हो जाते हैं। सोशल मीडिया पर प्रदर्शनकारी महिलाओं के साथ मारपीट के वीडियो इसकी तस्दीक करते हैं। यह अच्छा है कि दिल्ली पुलिस ने स्वतः संज्ञान लेकर मारपीट करने वाले लोगों की पहचान की और कुछ को गिरफ्तार किया। सुखद यह भी है कि शीर्ष अदालत ने अगली सुनवाई, यानी मंगलवार तक राजधानी में मेट्रो और इंटरनेट सेवाओं की निर्बाध बहाली सुनिश्चित करने और अनावश्यक बैरिकेड्स हटाने की बात कही है। यह संकेत है कि हमारी संस्थाएं अपने नागरिकों के हितों की रक्षा करना बखूबी जानती हैं। इसलिए संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार प्रवक्ता को 'सामूहिक हिरासत संबंधी खबरों' से 'चिंतित' होने का मतलब ही नहीं था, और हमारी सरकार ने भारतीय संविधान की उदारता का हवाला देते हुए उनके इस कृत्य को स्वाभाविक ही 'आंतरिक मामलों में अनावश्यक हस्तक्षेप' बताया है।

प्रशासन को ऐसी व्यवस्था बनानी चाहिए कि नागरिकों के लोकतांत्रिक अधिकारों का हनन न हो, साथ ही कानून का राज भी बना रहे। टकराव नहीं, संवाद पर हो जोर।

मुख्य चुनाव आयुक्त के खिलाफ जिस तरह का माहौल बन रहा है, उसका जल्द अंत होना आवश्यक है। भारतीय चुनाव आयोग की दुनिया भर में साख है और यह भरोसा डिगना नहीं चाहिए। इस मुद्दे पर किसी तरह की राजनीति से भी बचने की जरूरत है। निस्संदेह, विरोध-प्रदर्शन जीवंत लोकतंत्र की पहचान हैं, लेकिन ये सकारात्मक सोच के साथ होने चाहिए, नकारात्मक नहीं। इतना ही नहीं, यदि ऐसे प्रदर्शनों से आम जनजीवन प्रभावित हो, तो आंदोलनकारियों को अपनी रणनीति पर विचार करना चाहिए। राजनीतिक दलों के लिए भी यह प्रकरण आंईने की तरह है। उनको यह समझना होगा कि नागरिकों के हित में उनके हित निहित हैं। सांविधानिक पद पर आसीन व्यक्ति को हटाने की प्रक्रिया भारतीय संविधान में निहित है, और उसका सम्मान सभी के लिए आवश्यक है। इसीलिए, संयम और संवाद से ही समस्या का हल तलाशना बेहतर होगा। हालांकि, इससे भी इनकार नहीं किया जा सकता कि लोकतांत्रिक आंदोलनों से लोगों की असहमति बाहर आती है, जिससे लोकतंत्र का इकबाल बुलंद होता है। सुप्रीम कोर्ट की टिप्पणी का एक मूक संदेश यह भी निकाला जा सकता है।

अमेरिकी कार्रवाई की काट खोजे भारत



आलोक जोशी | वरिष्ठ पत्रकार

आठ बड़ी टेक कंपनियों के खिलाफ ग्रीन कार्ड संबंधी अमेरिकी कार्रवाई ने भारत के सामने एक असहज स्थिति पैदा कर दी है। यह समय बेहद सूझबूझ और संयमित कूटनीति का है।



अमेरिका ने भारतीय आईटी पेशेवरों के लिए खतरे की घंटी बजा दी है। यही नहीं, उसने आठ बड़ी अमेरिकी और भारतीय आईटी कंपनियों को अपने 'परमानेंट लेबर सर्टिफिकेशन' या पर्म प्रोग्राम से निलंबित करने का एलान किया है। इसका सीधा मतलब यह है कि ये कंपनियां अपने कर्मचारियों को ग्रीन कार्ड की अर्जी के लिए प्रमाणित नहीं कर पाएंगी। ग्रीन कार्ड अमेरिका में काम कर रहे विदेशी लोगों के लिए एक तरह का परमिट है, जिससे अमेरिकी नागरिक बने बिना उन्हें वहां स्थायी रूप से रहने और काम करने की छूट मिलती है।

ट्रंप प्रशासन ने यह एलान भी बहुत नाटकीय अंदाज में किया। अमेरिकी सरकार के तीन बड़े अधिकारियों- उप-राष्ट्रपति जे डी वांस, श्रम मंत्री कीथ सौंडरलिंग और एटॉर्नी जनरल टॉड ब्लांश ने साझा प्रेस कॉन्फ्रेंस करके यह खबर दी। उन्होंने कहा कि माइक्रोसॉफ्ट, एडोबी, कॉग्निजेंट, इन्फोसिस, टाटा कंसल्टेंसी सर्विसेज, विप्रो, एचसीएलटेक और कैपजेमिनी को पर्म प्रोग्राम से निलंबित किया जा रहा है। यह कार्रवाई 'एंटी फ्रॉड टास्कफोर्स' के तहत हुई है। उन्होंने इन कंपनियों पर वीजा धोखाधड़ी का आरोप लगाया है।

अमेरिका में आठ बड़ी टेक कंपनियों के खिलाफ हुई इस कार्रवाई ने भारत के सामने एक असहज सवाल खड़ा कर दिया है। जिन भारतीय इंजीनियरों और हुनरमंद पेशेवरों की प्रतिभा ने अमेरिकी टेक उद्योग को दुनिया में सबसे आगे पहुंचाने में बड़ी भूमिका निभाई, अब उन्हीं की लियाकत और उपयोगिता पर सवाल उठ रहे हैं। ट्रंप सरकार का आरोप है कि इन कंपनियों ने विदेशी कर्मचारियों की नियुक्ति के नियमों का दुरुपयोग किया और अमेरिकी कामगारों को निकालकर विदेशियों को सस्ती मजदूरी पर नौकरियां दीं।

इसीलिए, श्रम मंत्री कीथ सॉन्डरलिंग ने कहा कि उन्होंने सांप का सिर कुचल दिया है। जो कंपनियां यह जाल-फरेब रच रही थीं, उन्हें ही निलंबित कर दिया, लेकिन उन्होंने जैसी भाषा इस्तेमाल की है, उससे विवाद को गंभीर बना दिया है। सवाल है, यह घोषणा सिर्फ अमेरिकी नागरिकों के रोजगार बचाने के लिए है या आप्रवासन नीति को कठोर करके भारत को कोई कठोर राजनीतिक संदेश देने की कोशिश भी है? भारत इसका जवाब कैसे दे- टकराव से, कूटनीति से या कारोबार व रोजगार के मामले में अपनी ताकत बढ़ाकर?

यहां एक फर्क समझना जरूरी है। एच-1बी वीजा अमेरिका में जाकर नौकरी करने की अस्थायी अनुमति देता है, जबकि ग्रीन कार्ड वहां बसने का रास्ता है। इस फैसले का यह मतलब कतई नहीं है कि वहां काम कर रहे सभी भारतीय कर्मचारियों के वीजा तत्काल रद्द हो जाएंगे। हां! एच-1बी वीजा पर अमेरिका में काम कर रहे जिन पेशेवरों की ग्रीन कार्ड की अर्जियां मंजूरी के नजदीक थीं, उनके लिए अब मामला गंभीर हो सकता है। खासकर ऐसे लोग, जो वर्षों से अमेरिका में काम कर रहे हैं, जिनके बच्चे वहां पढ़ते हैं और जिन्होंने ग्रीन कार्ड मिलना तय मानकर अपनी और अपने परिवार के भविष्य की योजनाएं बना रखी हैं।

पाबंदी की घोषणा के साथ ही कहा गया है कि साल 2009 से अब तक इन कंपनियों ने 30 लाख विदेशियों को नौकरियां देने की इजाजत मांगी और ये 2,30,000 एच-1बी वीजा ले चुकी हैं और एक लाख से ज्यादा परमानेंट लेबर सर्टिफिकेट, यानी ग्रीन कार्ड। आरोप लगाया गया है कि इन कंपनियों ने अमेरिकी नागरिकों को नौकरी से निकालकर उनकी जगह उनसे डेढ़ गुना विदेशी लोगों को कम पगार पर काम दिया है।

संबंधित कंपनियों ने इन आरोपों को गलत बताया है। माइक्रोसॉफ्ट ने कहा कि अमेरिका में उसके ज्यादा कर्मचारी अमेरिकी नागरिक ही हैं, और उसने जो एच-1बी वीजा आवेदन किए, उसका बड़ा हिस्सा पहले से काम कर रहे कर्मचारियों के वीजा की तारीख बढ़ाने या उनकी श्रेणी बदलने के मामले थे, न कि नए कर्मचारियों की भर्ती के लिए। टीसीएस ने भी कहा है कि अमेरिकी सरकार के नए फैसले से उसके काम पर असर पड़ने की आशंका नहीं है। कंपनी अगले पांच वर्षों में 15,000 कर्मचारियों की भर्ती करने का इरादा रखती है व स्थानीय प्रतिभाशाली लोगों को रोजगार देने को प्रतिबद्ध है।

अमेरिका के टेक कारोबार में भारतीयों की अहमियत समझने के लिए सिर्फ 2024 के अमेरिकी सरकार के आंकड़े को देखना दिलचस्प होगा। इस साल जितने एच-1बी वीजा दिए गए, उनमें 71 प्रतिशत भारतीय थे। हालांकि, यह सिर्फ इंजीनियरों का आंकड़ा नहीं है। दूसरी तरफ, भारत से अमेरिकी टेक्नोलॉजी उद्योग का कुल निर्यात 2024-25 में करीब 224 अरब डॉलर था। ऐसे में, ग्रीन कार्ड को लेकर अगर अमेरिका का रुख ऐसा ही रहा, तो फिर कंपनियों को अपने काम का अंदाज बदलना ही होगा।

भारतीय पेशेवरों को जोहो (प्रौद्योगिकी कंपनी) के संस्थापक श्रीधर वेंबु की बात पर भी ध्यान देना चाहिए। उन्होंने इस मसले पर एक्स पर लिखा है कि भारतीयों ने अमेरिका के तकनीकी कौशल को बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, लेकिन अब अमेरिका का एक बड़ा हिस्सा हमें नहीं चाहता। उन्होंने आगे लिखा है- 'कम बैक, लेट्स बिल्ड इंडिया।' यह एक आह्वान है। एक सपना भी, जो भारत में बहुत से लोग बहुत समय से देख रहे हैं। हम अपना उद्योग, अपनी ताकत क्यों न बनाएं?

इतिहास गवाह है, 1960 के दशक में अनाज की किल्लत से जूझते भारत ने कुछ तात्कालिक मदद भी ली, पर साथ ही इसने बीज, सिंचाई एवं कृषि अनुसंधान में निवेश किया, हरित क्रांति की दिशा में कदम बढ़ाया। यह बताता है कि लंबे दौर में आत्म-निर्भरता और आत्म-सम्मान का रास्ता दूसरे देशों की शर्तों पर सवाल उठाकर नहीं, अपनी जरूरतें पूरी करने की क्षमता हासिल करने से निकलता है। इस वक्त भारत और यूरोप के बीच मुक्त व्यापार समझौते पर काम चल रहा है। यूरोप भारत के लिए अमेरिकी बाजार का विकल्प तो नहीं, पर एक और बाजार खुलने का अवसर जरूर है। इसी तरह, ब्रिटेन, कनाडा, ऑस्ट्रेलिया, जापान, दक्षिण कोरिया, सिंगापुर और खाड़ी देशों के साथ भी तकनीकी सहयोग और हुनरमंद नौजवानों के लिए अवसर बढ़ाने चाहिए।

इस वक्त अमेरिका को उसी की भाषा में जवाब देने से कोई फायदा होने वाला नहीं है, लेकिन हमें अपनी कंपनियों और नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करनी चाहिए। साथ ही, घरेलू क्षमता तथा वैकल्पिक बाजारों को मजबूत करना चाहिए, क्योंकि आखिर में किसी देश की असली ताकत उसके नागरिकों को विदेश में मिलने वाले वेतन से नहीं मापी जा सकती। वह तो इस बात से ही तय होगी कि वह देश अपने यहां कितना ज्ञान, कितनी तकनीक और कितने अवसर पैदा कर सकता है!

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

दवाओं के सिर्फ दाम नहीं, गुणवत्ता पर भी नजर रहे



चंद्रकांत लहारिया | वरिष्ठ चिकित्सक

केंद्र सरकार का कैंसर की दवाओं पर व्यापारिक मुनाफे की सीमा तय करने का फैसला स्वागतयोग्य है। देश में कैंसर के मामले लगातार बढ़ रहे हैं। किसी परिवार में कैंसर की पुष्टि होने पर केवल जान जाने का डर नहीं सताता, बल्कि जीवन भर की जमा-पूंजी खत्म होने की आशंका भी पैदा हो जाती है। कुछ दवाओं की कीमत लाखों रुपये में होने के कारण महीनों चलने वाला इलाज परिवारों को आर्थिक संकट में धकेल देता है, इसलिए कैंसर की सस्ती दवाएं जन-स्वास्थ्य की जरूरत हैं।

सरकार का प्रस्ताव है कि कैंसर की दवाओं पर व्यापारिक मार्जिन अधिकतम 30 प्रतिशत रखा जाए। इससे कुछ दवाओं की कीमतें 70 प्रतिशत तक घट सकती हैं और तमाम मरीजों की सालाना लगभग 2,500 करोड़ रुपये की बचत हो सकती है। आंकड़े उत्साहजनक हैं, लेकिन एक सवाल जरूरी है। क्या दवाएं सस्ती होने से कैंसर का इलाज भी बेहतर और सस्ता हो जाएगा?

भारत में ऐसा पहली बार नहीं हो रहा। वर्ष 2017 में राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण प्राधिकरण ने हृदय में लगाए जाने वाले स्टेंट की कीमतों पर नियंत्रण लगाया था। इससे कीमतें 85 प्रतिशत तक घटी थीं। घुटने के प्रत्यारोपण में इस्तेमाल होने वाले इम्प्लांट की कीमतें भी 69 प्रतिशत तक कम हुईं। वर्ष 2019 में कैंसर की 42 दवाओं पर व्यापारिक मार्जिन सीमित किया गया था। इन फैसलों ने साबित किया कि दवा और चिकित्सा उपकरणों के कारोबार में अत्यधिक मुनाफे पर अंकुश लगाया जा सकता है। हालांकि, पिछले अनुभवों से कुछ सबक भी मिलते हैं। कार्डाक में स्टेंट की कीमतों पर नियंत्रण के प्रभाव का अध्ययन बताता है कि निजी अस्पतालों में एंजियोप्लास्टी और बाईपास सर्जरी के अनुपात में बदलाव आया। इससे किसी विशेष प्रक्रिया के अनावश्यक होने का प्रमाण नहीं मिलता, पर इलाज के निर्णयों पर आर्थिक प्रोत्साहनों के प्रभाव को लेकर सवाल जरूर उठते हैं। अस्पताल दवाओं या उपकरणों पर घटे मुनाफे की भरपायी जांच, प्रक्रिया, परामर्श अथवा अन्य सेवाओं का शुल्क बढ़ाकर भी कर सकते हैं। कैंसर के इलाज में भी यही खतरा है।

दवाओं की कीमतों पर नियंत्रण जरूरी है, पर साथ-साथ सही इलाज, गुणवत्ता और गैर-जरूरी उपचार पर रोक भी आवश्यक है।

यहां दवाओं की गुणवत्ता भी महत्वपूर्ण है। केवल व्यापारिक मार्जिन घटाने से गुणवत्ता प्रभावित नहीं होनी चाहिए, लेकिन अव्यावहारिक मूल्य नियंत्रण के कारण कुछ कंपनियां उत्पादन घटा सकती हैं या बाजार छोड़ सकती हैं। नकली और घटिया गुणवत्ता वाली दवाओं की समस्या पहले से मौजूद है। कैंसर में यह विशेष रूप से खतरनाक है, क्योंकि दवा के असर न करने की बीमारी बढ़ने का परिणाम समझा लिया जाता है। इसलिए गुणवत्ता जांच व आपूर्ति की निगरानी भी जरूरी है।

इस बहस में एक और महत्वपूर्ण मुद्दा लगभग गायब है- जरूरत से ज्यादा दवाएं व अनावश्यक इलाज। अपनी हालिया प्रकाशित किताब *पिल फ्री* में लेखक ने विस्तार से जिक्र किया है। जैसे अब कैंसर के उपचार में अभूतपूर्व प्रगति हुई है, पर हर नई और महंगी दवा मरीज की जिंदगी में सार्थक बढ़ोतरी नहीं करती। कुछ उपचार चुनिंदा परिस्थितियों में जीवन केवल कुछ सप्ताह बढ़ाते हैं, जबकि उनके दुष्प्रभाव गंभीर हो सकते हैं। इसलिए कैंसर के इलाज में सवाल केवल यह नहीं होना चाहिए कि कौन-सी नई दवा उपलब्ध है, बल्कि यह भी कि उससे मरीज को कितना वास्तविक लाभ मिलेगा?

आगे का रास्ता स्पष्ट है। सरकार को दवाओं की संशोधित कीमतें सार्वजनिक करनी चाहिए। अस्पतालों की खरीद कीमतों और मरीजों के बिल की जांच संभव होनी चाहिए। कैंसर उपचार संबंधी दिशा-निर्देशों में वास्तविक लाभ देने वाले उपचारों को प्राथमिकता मिले। दवाओं की गुणवत्ता और उपलब्धता पर निगरानी हो। अस्पतालों को बिल देना अनिवार्य बनाया जाए, ताकि दवाओं पर घटा मुनाफा दूसरी सेवाओं के बढ़े शुल्क के रूप में वापस न वसूला जाए। सबसे महत्वपूर्ण बात, इस नीति की सफलता केवल कीमतों में घोषित कटौती से नहीं, बल्कि मरीजों के वास्तविक खर्च, उपचार की गुणवत्ता और स्वास्थ्य परिणामों से मापी जानी चाहिए। कैंसर का सस्ता इलाज तभी सार्थक है, जब वह अनावश्यक इलाज भी न हो। आखिर मरीज को केवल सस्ती दवा नहीं, सही और भरोसेमंद उपचार चाहिए।

(ये लेखक के अपने विचार हैं)

मनसा वाचा कर्मणा

नवरात्र का महत्व

कहा जाता है कि शरद नवरात्र में जो भी भक्त पूरे नौ दिन पूरे विधि-विधान के साथ मां दुर्गा के नव स्वरूपों की अराधना करता है, उसकी हर मनोकामना पूर्ण होती है। नवरात्र वर्ष में दो बार आते हैं- एक चैत्र मास में, उसे चैत्र नवरात्र या वासंती नवरात्र भी कहते हैं। दूसरा दीपावली से ठीक पहले, जिसे शरद नवरात्र कहते हैं। दोनों ही नवरात्रों का अपना अलग-अलग महत्व है और पूजा विधि भी अलग-अलग है। शास्त्रों में कहा गया है कि सभी जीव-जंतुओं में चेतना के रूप में मां देवी तुम स्थित हो। ऐसे में नवरात्र के नौ दिनों के अलग-अलग स्वरूपों को निहारते हुए उनकी अराधना की जाती है। नवरात्र के नौ दिनों में पहले तीन दिन तमोगुणी प्रकृति की अराधना करते हैं, दूसरे तीन दिन रजोगुणी प्रकृति की और आखिरी तीन सतोगुणी प्रकृति की अराधना का महत्व है।

माता दुर्गा के सभी नौ रूपों का भी अलग-अलग महत्व है। माता का पहला रूप शैलपुत्री, दूसरा रूप ब्रह्मचारिणी, तीसरा रूप चंद्रघंटा, चौथा रूप कूष्मांडा, पांचवां रूप स्कंदमाता, छठा रूप कात्यायनी, सातवां रूप कालरात्रि, आठवां रूप महागौरी तथा नौवां रूप सिद्धिदात्री का है। इन नौ स्वरूपों की पूजा में हृदय को शुद्ध और चित्त को विशुद्ध बनाने के लिए अनुष्ठान करना चाहिए। शारदीय नवरात्र शक्ति उपासना का पर्व है, तो शक्ति-भक्ति बढ़ाने का स्रोत भी। इस शक्ति के तीन रूप हैं- ज्ञानशक्ति, द्रव्यशक्ति और क्रियाशक्ति। तीनों रूपों को हमने क्रमशः नाम दिया है- महासरस्वती, महालक्ष्मी और महाकाली। इन शक्तियों से जीवन चक्र चलता है।

व्यक्ति के जीवन में, परिवार के जीवन में, समाज के जीवन में, वैश्विक जीवन में जितनी समस्याएं हैं, चाहे वे व्यक्तिगत हों, पारिवारिक हों, सामाजिक हों, वैश्विक हों- सब के मूल में कारण है मोह। मोह रूपी महिषासुर समग्र सृष्टि में उपद्रव मचा रहा है। परामद्या मां भगवती के इन्हीं तीन रूपों के द्वारा उसे नियंत्रित किया जा सकता है। नवरात्र के पीछे वैज्ञानिक आधार भी है। पृथ्वी द्वारा सूर्य की परिक्रमा में चार संधियां होती हैं। इनमें से मार्च व सितंबर माह में पड़ने वाली गोल संधियों में साल के दो सुखद नवरात्र पड़ते हैं। इस समय रोगाणुओं के आक्रमण की संभावना अधिक होती है। अतः उस समय स्वस्थ रहने के लिए की जाने वाली प्रक्रिया का नाम नवरात्र है।

हमारे प्रत्येक त्योहार के पीछे ऋषि-मुनियों का गहरा चिंतन छिपा है। नवरात्र का पर्व इसी परंपरा का प्रतीक है। शरीर को शुद्ध रखने के लिए की जाने वाली प्रक्रिया का नाम नवरात्र है।

हमारे प्रत्येक त्योहार के पीछे ऋषि-मुनियों का गहरा चिंतन छिपा है। नवरात्र इसी की प्रतीक है। ऐसी ही जगत जननी के प्रति अनंत की आस्था को दृढ़ करने के लिए नवरात्र की शुरुआत हुई है। हमारा देह मिट्टी से बना है। देह के विविध द्वार से आत्मा का प्रकाश प्रगट होता है। मिट्टी के गरबे में छोटे-छोटे छिद्र बनाए जाते हैं, जिससे आत्मदीप का प्रकाश सभी जगह फैलता रहे। फिर हम स्तुति करते हैं- *या देवी सर्वभूतेषु मातृ रुपेण संस्थिता।*

संत रमेश भाई ओझा

ओम बिरला | लोकसभा अध्यक्ष



प्रौद्योगिकी सिर्फ सुविधा के लिए नहीं है, बल्कि यह जनता को लोकतांत्रिक संस्थाओं से जोड़ने का एक अच्छा साधन है। इसके उपयोग से जनता विधायिका के नियमों और निर्णयों के बारे में बेहतर ढंग से जान सकती है।

हिन्दुस्तान | 75 साल पहले | 12 अक्तूबर, 1951

मिस्र का धड़ाका

ब्रिटेन ने एशिया में अपने साम्राज्य को प्रायः समाप्त कर दिया है। भारत और बर्मा आज पूर्ण स्वतंत्र राष्ट्र हैं। लंका को औपनिवेशिक दर्जा प्राप्त हो गया है। मलाया और हांगकांग में ब्रिटेन ने अपने पांव अवश्य जमा रखे हैं। किन्तु मलाया में विद्रोह की चिनगारियां सुलग रही हैं और हाल ही में वहां के ब्रिटिश हाई कमिश्नर सर हेनरी गुरनी का विद्रोहियों के हाथों जान से मार दिया जाना स्थिति की गम्भीरता को ही प्रकट करता है। हांगकांग पर चीन का दावा है और आगे चलकर ब्रिटेन को चीन के साथ उसके बारे में संतोषजनक समाधान करना होगा। किन्तु ब्रिटेन ने एशिया में साम्राज्य की समस्या को हल कर लिया है।

किन्तु मध्यपूर्व में ब्रिटेन की परेशानियों का अन्त नहीं हुआ है। तेल के बारे में ईरान के साथ उसका झगड़ा चल रहा है और उसने गम्भीर रूप धारण कर लिया है। मध्यपूर्व के देशों में भी राष्ट्रीय स्वतंत्रता की भावना जागृत हो चुकी है और वे किसी दूसरे देश द्वारा अपने भीतरी मामलों में हस्तक्षेप किया जाना अथवा अपने आर्थिक साधनों का शोषण किया जाना पसन्द नहीं कर सकते। ब्रिटेन ने मध्यपूर्व के देशों में अपने साम्राज्य की बढ़ी हुई ताकत के दिनों में जो विशेषाधिकार प्राप्त किये थे, उनको आज ताकत के जोर पर ही कायम रख सकता है। किन्तु आज बड़ा से बड़ा राष्ट्र भी ताकत का प्रयोग करके महायुद्ध की आग भड़काने का खतरा मोल लेने की स्थिति में नहीं है। यही कारण है कि ईरान ने ब्रिटिश तेल कम्पनी के साथ हुए समझौते को रद्द कर दिया और तेल उद्योग के राष्ट्रीयकरण का कानून बना दिया है। आज ईरान में ब्रिटिश तेल कम्पनी के लिए काम करना नामुमकिन हो गया है और ईरान की जिद के आगे ब्रिटेन को तेल कम्पनी के तमाम अंग्रेज कर्मचारियों को ईरान से हटा लेना पड़ा है। इस मामले में ब्रिटेन को काफी नीचा देखना पड़ा है।

ब्रिटेन में आम चुनाव निकट भविष्य में होनेवाले हैं। मजदूर सरकार का भविष्य अधर में झूल रहा है। ऐसे समय यदि अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में ब्रिटेन को नीचा देखना पड़ता है तो ब्रिटिश मतदाताओं पर उसकी प्रतिक्रिया अनुकूल नहीं हो सकती। ईरान की घटनाओं से ब्रिटेन का विरोधी दल पूरा लाभ उठाने की चेष्टा कर रहा है। ऐसी विषम स्थिति में मिस्र ने ब्रिटेन के लिए एक नया सिरदर्द उत्पन्न कर दिया है।

बच्चों की तस्वीरें साझा करने से बचें

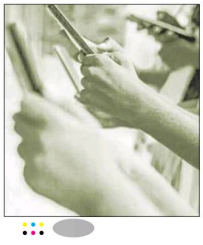
उस बच्चे का सोशल मीडिया पर अपना कोई खाता नहीं था, फिर भी इंटरनेट पर उसकी सैकड़ों तस्वीरें मौजूद थीं। जन्म के कुछ घंटों बाद की पहली तस्वीर से लेकर जन्मदिन, स्कूल का पहला दिन, परीक्षा परिणाम, बीमारी और पारिवारिक यात्राओं तक के जीवन के उसके अनेक क्षण सार्वजनिक हो चुके थे। यह सब उसके माता-पिता ने प्रेम, उत्साह और गर्व में साझा किया था। किंतु बच्चा जब इतना बड़ा होगा कि अपनी सार्वजनिक पहचान के बारे में सोच सके, तब शायद उसके जीवन की कहानी का बड़ा हिस्सा पहले ही दूसरों के सामने जाहिर हो चुका होगा।

पहले बच्चों की तस्वीरें घर के एलबम में रहती थीं। उन्हें परिवार के लोग या घर आए कुछ अतिथि ही देख पाते थे। अब सोशल मीडिया पर एक तस्वीर डालते ही वह सैकड़ों लोगों और कई बार अनजान दर्शकों तक पहुंच जाती है। प्रतिक्रिया में मिलने वाली शुभकामनाएं माता-पिता को खुशी देती हैं, इसलिए तस्वीरें साझा करने की इच्छा को केवल दिखावा या असावधानी कह देना उचित नहीं होगा। अधिकतर मामलों में इसकी शुरुआत स्नेह से ही होती है। समस्या तब पैदा होती है, जब प्रेम की यह सहज अभिव्यक्ति बच्चे की निजता, सुरक्षा और भावी स्वतंत्रता को पीछे छोड़ देती है। बच्चे की तस्वीर केवल उसका चेहरा नहीं दिखाती, बल्कि अलग-अलग अवसरों पर साझा की गई सूचनाएं उसका विस्तृत डिजिटल परिचय बना देती हैं। जाहिर है, इसमें सुरक्षा संबंधी चर्चाओं को अक्सर भुला दिया जाता है। इसी तरह, किसी बच्चे का वीडियो परिवार को उस समय मजेदार लग सकता है, लेकिन वही सामग्री किशोरावस्था में उसके लिए उपहास और अपमान का कारण बन सकती है। निजता का अर्थ केवल खतरे से बचना नहीं है; बल्कि अपनी कहानी पर अधिकार और यह तय करने की स्वतंत्रता भी है कि दुनिया हमें किस रूप में जाने।

कृत्रिम बुद्धिमत्ता (एआई) के दौर ने इस चिंता को और गंभीर बना दिया है। आज अभिभावकीय अधिकार और बच्चे के अधिकार के बीच संतुलन समझना जरूरी है। माता-पिता बच्चे के संरक्षक हैं, लेकिन संरक्षण का अर्थ बच्चे की निजता पर स्थायी स्वामित्व नहीं हो सकता। तकनीक बदलती रहेगी, पर एक सिद्धांत स्थायी होना चाहिए- बच्चे की स्मृतियां परिवार की हो सकती हैं, पर उसकी सार्वजनिक पहचान पर पहला अधिकार उसी का है। माता-पिता को उसके जीवन की कहानी पूरी लिख देने के बजाय उसमें इतनी खाली जगह अवश्य छोड़नी चाहिए कि बच्चा बड़ा होकर स्वयं तय कर सके कि दुनिया उसे किस रूप में जाने।

अजहर आलम अंसारी, टिप्पणीकार

अनुलोम-विलोम
सोशल मीडिया और बच्चे



सार्वजनिक करने में आखिर क्या बुराई

बच्चों के बारे में सोशल मीडिया पर लिखने या उनकी तस्वीर डालने में आखिर क्या बुराई है? इस तरह की 'मोरल पुलिसिंग' बंद होनी चाहिए। आज हर तरफ यही बहस चल रही है कि बच्चों को सोशल मीडिया पर दिखाना चाहिए अथवा नहीं, या फिर कितना दिखाना चाहिए? एक ओर माता-पिता अपने बच्चों की उपलब्धियां और खुशियां साझा करना चाहते हैं, तो दूसरी ओर हर पोस्ट पर नैतिक टिप्पणियां, ट्रोलिंग व अनचाही सलाह का सिलसिला शुरू हो जाता है। ऐसे में, समस्या बच्चों की तस्वीर साझा करने से अधिक उस सामाजिक व्यवहार की जान पड़ती है, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता में दखल देता है।

भारत का संविधान प्रत्येक नागरिक को अभिव्यक्ति और निजता, दोनों का अधिकार देता है। माता-पिता को अपने बच्चे के जन्मदिन, पुरस्कार, सांस्कृतिक कार्यक्रम या पारिवारिक क्षण साझा करने का अधिकार है। जब कोई पोस्ट कानून का उल्लंघन नहीं करे, तब केवल व्यक्तिगत पसंद के आधार पर किसी परिवार को शर्मिंदा करना उचित नहीं कहा जा सकता। सोशल मीडिया पर अक्सर देखा गया है कि बच्चों के कपड़े, पालन-पोषण, भाषा या नृत्य वीडियो को लेकर अनजान लोग कठोर व प्रतिकूल टिप्पणियां करने लगते हैं। कई बाल कलाकारों और खिलाड़ियों के परिवारों ने भी ट्रोलिंग का सामना किया है, जबकि उनके पोस्ट का उद्देश्य केवल उपलब्धि साझा करना था। इससे बच्चों के आत्मविश्वास और मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

हालांकि, भारत के डिजिटल व्यक्तिगत डाटा संरक्षण अधिनियम, 2023 में बच्चों के डाटा के लिए विशेष सुरक्षा का प्रावधान किया गया है। इसी तरह सोशल मीडिया मंचों ने भी अपनी तरफ से प्रयास किए हैं। सभी का मकसद एक है कि बच्चों को ऑनलाइन शोषण, पहचान की चोरी और साइबर बुलिंग से बचाना है। जब बाल-सुरक्षा के प्रयास ही हो रहे हैं, तब बच्चों को सोशल मीडिया से दूर क्यों किया जाए?

साफ है, समाज को जिम्मेदारपूर्ण रवैया अपनाना होगा। यदि किसी पोस्ट में वास्तव में बच्चे की सुरक्षा पर खतरा दिखता है, तो शालीनता से उसे सावधान करना बेहतर है; सार्वजनिक अपमान, चरित्र पर टिप्पणी या अभिभावकों को 'अच्छा-बुरा' घोषित करना मोरल पुलिसिंग बन जाता है। यह समझना होगा कि डिजिटल नागरिकता का अर्थ केवल तकनीक का उपयोग नहीं, बल्कि संवाद की मर्यादा भी है। आज आवश्यकता संतुलन बनाने की है- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, बच्चों की निजता और ऑनलाइन सुरक्षा तीनों साथ चलें। यही नए भारत की पहचान हो सकती है।

हितेश मिश्र, टिप्पणीकार

हमें कुछ छोड़ना भी आना चाहिए

बदलते वक्त के साथ हमारी पसंद, जरूरतें और प्राथमिकताएं भी बदलती हैं। जो चीजें आज हमारे लिए जरूरी हैं, हो सकता है कि समय के साथ उनकी भूमिका बदल जाए। फिर भी पुरानी चीजों से लगाव हमें उनसे बांधे रखता है। ऐसे में उन्हें छोड़ना बीते वक्त को नकारना नहीं, बल्कि जीवन में आए बदलाव को स्वीकार करना है।



मुथोनी अमरान

बचपन में मेरे पास एक जोड़ी जूते थे, जिनसे मुझे बहुत लगाव था। मैं उन्हें हर जगह पहनकर जाती थी। मुझे इस बात की परवाह भी नहीं थी कि मैं जहां जा रही हूं, वहां उन जूतों को पहनना ठीक है या नहीं। मुझे वे जूते पहनने होते थे, तो बस पहनने होते थे।

जब वे छोटे पड़ने लगे, तब भी मैं उन्हें छोड़ना नहीं चाहती थी। मैं किसी तरह अपने पैरों को उन जूतों में ठूंस लेती और खुद को समझा लेती कि वे अब भी मुझे ठीक आते हैं। कुछ लोग सोचते भी होंगे कि वो जूते छोटे हो गए हैं और मुझे उन्हें छोड़ देना चाहिए।

जब भी मैं जीवन के अलग-अलग दौर, किसी चीज को छोड़ने, उससे दूर होने, आगे बढ़ने या नई चीजों के लिए जगह बनाने जैसी बातों के बारे में सुनती हूं, तो मुझे उन जूतों की याद आती है।

समय के साथ जरूरतें बदलना

आमतौर पर, जब हम किसी चीज को छोड़ने की बात करते हैं, तो उसके पीछे यह धारणा होती है कि उस चीज में कुछ गड़बड़ है। वह हमारे लिए नुकसानदेह है या हमें आगे बढ़ने से रोक रही है। हमें किसी और बेहतर चीज के लिए जगह बनानी है।

कई बार किसी चीज को छोड़ने का मतलब सचमुच यही होता है। हर बार लेकिन ऐसा नहीं होता। कभी-कभी हमें उन चीजों को भी छोड़ना पड़ता है, जो बहुत अच्छी होती हैं। और सच कहूं, तो मुझे लगता है कि ऐसा करना कहीं ज्यादा मुश्किल होता है।

मिसाल के लिए, व्यायाम को ही लें। मुझे पैदल चलना बहुत पसंद है। इससे मुझे खुशी मिलती है, दिमाग साफ होता है और घर से बाहर निकलने का मौका मिलता है। अगर कोई मुझसे कहे कि अब मुझे पैदल चलने में कम समय देना चाहिए और वजन उठाने वाले व्यायाम करने चाहिए, क्योंकि मेरा शरीर बदल रहा है और उसे अब अलग तरह की कसरत की जरूरत है, तो मेरे लिए इस बदलाव को स्वीकार करना मुश्किल होगा। वहीं, मुझे यह भी समझना होगा कि पैदल चलना भले मुझे पसंद हो, पर मेरे शरीर की सभी जरूरतें पूरी करने में वह अकेला पर्याप्त नहीं होगा।

जीवन में बार-बार ऐसा होता है। कुछ दोस्तियां ऐसी होती हैं, जिनमें कोई बुराई नहीं होती। कुछ रिश्ते अच्छे चलरहे होते हैं, उनमें न कोई बड़ा विश्वासघात होता है, न कोई भयानक झगड़ा और न ही कोई ऐसी स्पष्ट वजह होती है, जिसकी ओर इशारा करके हम कह सकें कि मुझे यह रिश्ता छोड़ना ही पड़ेगा। इसी तरह कुछ नौकरियां अच्छी होती हैं। कुछ घर बहुत अच्छे होते हैं। कुछ शहर हमें बेहद पसंद होते हैं। कुछ सपने ऐसे होते हैं, जिन्हें हम पूरा होते हुए देखना चाहते थे। हमारे व्यक्तित्व के ही कुछ ऐसे पुराने रूप होते हैं, जो हमें खुशी देते हैं। फिर भी, कभी-कभी हमें इन सबको छोड़ना पड़ता है।

मुझे लगता है कि इस पहलू पर उतनी बात नहीं होती, जितनी होनी चाहिए।

छोड़नी पड़ जाती अच्छी चीजें भी

जब हम किसी चीज को बुरा मान लेते हैं, तो उसे छोड़ना आसान हो जाता है। यह कहना आसान होता है कि वह रिश्ता बहुत खराब था। वह नौकरी बेहद बुरी थी। वह जगह कभी मेरे लिए बनी ही नहीं थी। मैं तो वैसे भी उन बातों से काफी आगे निकल चुका हूं। कभी-कभी हम किसी चीज को छोड़ने के बाद भी यही करते हैं। हम उसमें कमियां ढूंढने लगते हैं, जिसे कभी हमने बहुत चाहा था। इससे उसे छोड़ने का फैसला सही ठहराना आसान हो जाता है, लेकिन क्या हो, अगर उसमें कोई बुराई थी ही नहीं? क्या हो, अगर वह अच्छी थी और हम उससे प्यार करते थे? या फिर वह हमारे लिए उपयोगी भी थी और हमें उस समय उसी की जरूरत थी?

मेरे लिए इस बात को समझाना कहीं ज्यादा मुश्किल है। अब हम इस विचार के काफी अभ्यस्त हो चुके हैं कि आगे बढ़ने का मतलब उन चीजों को पीछे छोड़ना है, जो अब हमारे लिए अच्छी नहीं रहीं।

सब चीजों को हमेशा साथ रखना कठिन

जगह बनाने का मतलब हमेशा उन चीजों को हटाना नहीं होता, जो हमें दुख पहुंचा रही हैं। कभी-कभी इसका मतलब यह स्वीकार करना होता है कि हम हर चीज को अपने साथ नहीं रख सकते, भले ही हमें वे सभी चीजें पसंद हों। यह बात अन्यायपूर्ण लगती है।

कभी-कभी मेरा मन होता है कि मैं पूछूं कि

- मैं दोनों चीजें साथ क्यों नहीं रख सकती?
- मैं उन जूतों को क्यों नहीं रख सकती?
- मैं पैदल चलना क्यों नहीं जारी रख सकती?
- मैं इस दोस्ती को ठीक वैसा ही क्यों नहीं बनाए रख सकती, जैसी वह आज है?
- मैं यहीं क्यों नहीं रह सकती?
- मैं हमेशा ऐसे ही क्यों नहीं रह सकती?

मुझे समझ में यही आता है कि यह जरूरी नहीं कि जीवन की हर अच्छी चीज हमेशा हमारे साथ बनी रहे। यह स्वीकार करना कठिन है, लेकिन हम जीवन की हर अच्छी चीज को हमेशा अपने साथ लेकर नहीं चल सकते। उन चीजों को भी नहीं, जो अपने आप में बिल्कुल अच्छी हैं।

- कुछ अच्छी चीजें भी एक दिन खत्म हो सकती हैं।
- कुछ चीजों से प्यार होने के बावजूद उन्हें छोड़ना पड़ सकता है।
- कुछ चीजें लंबे समय तक हमारे लिए बहुत अच्छी तरह काम करती हैं, लेकिन हम जैसे-जैसे बदलते हैं, वे हमारे लिए पहले जैसी उपयोगी नहीं रह जातीं।
- किसी चीज को छोड़ने का मतलब हमेशा यह नहीं कि हमने उसे गलत मान लिया है। इस तरह समझने का एक मतलब अपनी परिस्थितियों को स्वीकारना है। यह स्वीकारना है कि वे जूते खराब नहीं हुए थे। बस, मेरे पैर बड़े हो गए थे।

जीवन की कुछ चीजों को छोड़ देने की वजह भी इतनी ही सरल होती है।

- न कोई असफलता।
- न कोई पछतावा।
- न कोई निराशा।

बस, विकास और आगे बढ़ना।

इसी के साथ जुड़ा एक अजीब-सा, कभी-कभी तकलीफ देने वाला सच यह है कि आगे बढ़ने का मतलब सिर्फ नई चीजों के लिए जगह बनाना नहीं होता।

कभी-कभी हमें अपने जीवन में जगह बनाने के लिए उस चीज को भी छोड़ना पड़ता है, जिससे हम अब भी प्यार करते हैं।

kenyaonashoestring.co.ke

बदलाव को गले लगाएं

1. खुद को समय दें। नई परिस्थिति में ढलने के लिए खुद पर जल्दबाजी का दबाव न डालें।
2. भावनाओं को स्वीकारें। बदलाव के साथ दुख, डर या असमंजस होना स्वाभाविक है।
3. नए अवसर देखें। जो छूट रहा है, उसके साथ यह भी देखें कि क्या नया मिल रहा है।
4. बदलती जरूरतें समझें और नई आदतों की शुरुआत धीरे-धीरे करें।
5. पुराने अनुभवों को बेकार न समझें। उनके साथ अपनी नई चीजों को बेहतर बनाएं।

एआई के दौर में भी जरूरी ये इंसानी आदतें

एआई हमारे चारों ओर है और तेजी से दुनिया बदल रही है। फिर भी, कुछ चीजें सिर्फ इंसान कर सकते हैं। ऐसे में यह सोचने की जरूरत है कि इंसानियत बनाए रखने के लिए हमें अपनी किन खूबियों को बचाकर रखना होगा।



आजकल एआई यानी कृत्रिम बुद्धिमत्ता के बारे में सुनने और सोचने से बचना मुश्किल है। एआई कई ऐसे काम कर सकता है, जो हमारे लिए बेहद उपयोगी हैं। कई मायनों में एआई की क्षमताएं हैरान करती हैं।

हालांकि, कहीं न कहीं हम यह महसूस करते हैं कि इस बदलाव के बीच हम कुछ खो भी रहे हैं। हमें ठहरकर यह सोचना चाहिए कि वे कौन-सी मानवीय क्षमताएं हैं, जिन्हें हम बचाकर रखना चाहते हैं?

मशीनों से आगे हैं ये मानवीय खूबियां

असल मौजूदगी : एक-दूसरे का पूरे मन से साथ देना इंसानों के हिस्से की बात है। जब किसी प्रिय व्यक्ति की स्नेहभरी मौजूदगी हमारे तंत्रिका तंत्र को सुकून देती है। ऐसे लोगों के साथ रहना, जो हमें जानने-समझने की कोशिश करते हैं, हमें खुशी और सुरक्षा का एहसास कराता है।

परवाह करना : एआई की क्षमता हैरान कर सकती है, पर उसमें यह एहसास नहीं होता कि उसे सचमुच किसी चीज की परवाह है। यह जिम्मेदारी हमारी है। हम जिनकी परवाह करते हैं, उनके

> मशीनें काम कर सकती हैं, पर हम सिर्फ काम तक सीमित नहीं हैं। इंसानी अनुभव बहुत जटिल व अनोखे हैं।

अच्छे-बुरे को ध्यान में रखकर फैसले करते हैं। हमें उन चीजों से अपना जुड़ाव नहीं खोना चाहिए, जो हमारे लिए मायने रखती हैं।

असहजता के साथ रहना : तकनीक धीरे-धीरे हमारी असहज स्थितियों को स्वीकार करने की क्षमता कम कर रही है। फोन, कंप्यूटर, सोशल मीडिया, एआई और मनोरंजन की इतनी अधिक उपलब्धता ने हमें सुविधाओं में रहने का आदी बना दिया है।

हालांकि, असहज स्थिति में खुद को संभाल पाना एक बहुत मानवीय और महत्वपूर्ण क्षमता है। इसी से हम खुद को विकसित करते हैं, दूसरों से जुड़ते हैं, मतभेद होने के बावजूद मुश्किल बातचीत कर पाते हैं और अपने भीतर के विरोधों का सामना कर पाते हैं।

अपने लिए फैसले करना : कभी-कभी हम चाहते हैं कि हमारे लिए फैसले कोई और कर दे, क्योंकि लगातार निर्णय लेते-लेते हम थक चुके होते हैं। एआई यह तय नहीं कर सकता कि हमारे लिए क्या महत्वपूर्ण है, क्योंकि एआई के लिए वास्तव में कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं है। यह काम हमें करना होगा। हमें सोचना होगा कि हमारे लिए क्या मायने रखता है और हमें क्या करना है।

इंसान होने की आदत

हम जरा सी असहजता होने पर तुरंत तकनीक की मदद लेने लगते हैं। कभी-कभी अपनी उस असहजता और ऊब को महसूस करें। सोचिए, अगर अरस्तू, बुद्ध, एपिक्टेटस, शेक्सपियर, टॉल्स्टॉय, जेन ऑस्टिन या न्यूटन के पास ऐसी तकनीक होती, जो उन्हें ऊबने ही नहीं देती, तो वे क्या ऐसा रच पाते?

अपने काम को महत्व दें। तय करें कि आप किन चीजों पर ध्यान लगाना चाहेंगे और किन लोगों के साथ समय बिताना चाहते हैं। कृतज्ञता और सराहना के भाव को बढ़ाएं। खुद को विस्मय से भरने दें, जो इंसान होने के सबसे सुंदर अनुभवों में से एक है। थोड़ा धीमे चलें। इंसानी जुड़ाव, हमारी विचित्रताओं और प्रेम को महसूस करने और उसका आनंद लेने का समय खुद को दें। मशीनों की तरह इंसान सिर्फ अपने काम तक सीमित नहीं हैं। हम मशीनों से कहीं ज्यादा अनोखे और अप्रत्याशित हैं।

लिओ बाबौटा zenhabits.net

विविध

खुश रहें और मन का बोझ हल्का करें

बेहतर महसूस करने के लिए जीवन में हमेशा कोई बड़ा बदलाव करना जरूरी नहीं होता। कई बार छोटी-छोटी आदतें ही बहुत कुछ बदल देती हैं। रोजमर्रा की भागदौड़ के बीच थोड़ा ठहरकर खुद को समझने का मौका देने वाली ये आदतें मन हल्का कर सकती हैं।



दो मिनट वाले काम तुरंत कर लें

छोटे कामों को टालना आसान होता है, पर इस तरह धीरे-धीरे आधे-अधूरे कामों का बोझ बढ़ जाता है। अगर कोई काम थोड़ा सा सक्रिय होने पर आप उस काम को दो-तीन मिनट में निपटा सकते हैं, तो उसे तुरंत पूरा कर लीजिए। धीरे-धीरे अधूरे काम कम हो जाएंगे।

भावना को समझने से पहले उसे नाम दें

जब हम भावनात्मक रूप से परेशान होते हैं, तो दिमाग तुरंत उस स्थिति को लेकर कई तरह की धारणाएं बनाने लगता है। ऐसे समय में सबसे पहले रुकें और पहचानें कि आप वास्तव में क्या महसूस कर रहे हैं? क्या आप चिंतित हैं, निराश हैं, ईर्ष्या महसूस कर रहे हैं, अकेलापन है या गुस्सा आ रहा है? भावना को एक नाम देने पर, आप उससे थोड़ी दूरी बना लेते हैं। यह समझना आसान हो सकता है कि वह भावना कहां से आई और वह आपको क्या बताने की कोशिश कर रही है।

दिन की शुरुआत फोन से नहीं



आंख खुलते ही मोबाइल उठाने के बजाय कुछ समय खुद पर ध्यान दें। अपने आसपास के परिवेश से जुड़ें। ताजी हवा और सूरज की रोशनी को महसूस करें। जीवन के लिए आभार जाहिर करते हुए एक प्रार्थना से भी दिन की शुरुआत कर सकते हैं। सुबह जब पैर जमीन पर रखें, तो उसे महसूस करें। यह छोटा-सा अभ्यास आपको अपने वर्तमान पल से जोड़ देता है।

अपनी जटिल भावनाओं को स्वीकारें

हर समय केवल एक ही तरह की भावना महसूस करना जरूरी नहीं है। आप किसी बात के लिए आभारी भी हो सकते हैं और साथ ही परेशान भी। आप खुद से प्यार कर सकते हैं और अपने जीवन में कुछ बदलाव भी लाना चाह सकते हैं। आप उम्मीद से भरे हो सकते हैं और डर भी महसूस कर सकते हैं। अपनी भावनाओं को इस जटिलता को स्वीकार करें। इस तरह आप खुद को और दूसरों को बेहतर समझ पाते हैं।

पहले शरीर को शांत करें

जब दिमाग अशांत हो, तो हर बात का जवाब तर्क से या तुरंत खोजने की कोशिश न करें। शुरुआत शरीर को शांत करने से करें। थोड़ा पानी पिएं। अगर काफी समय से कुछ नहीं खाया है, तो प्रोटीन से भरपूर हल्का नाश्ता करें। कुछ मिनट बाहर जाएं। गहरी सांस लें। जब शरीर शांत हो जाए, तब दोबारा से अपने विचारों को देखें।

एकदा

तीन साधु

चीन के एक पहाड़ पर लकड़ी का प्राचीन मठ था। वहां अकेला रहने वाला भिक्षु रोज सुबह घाटी से पानी लाता। उसके मन में शांति और विचारों में स्पष्टता थी। वह जानता था कि मठ के लिए उसे ही यह काम करना होगा।

एक दिन वहां एक और युवा भिक्षु आया। अब दोनों बांस पर बाल्टी टांगकर साथ पानी लाने लगे। मठ में जल की व्यवस्था आसानी से चलती रही। समस्या तब शुरू हुई, जब तीसरे भिक्षु ने कदम रखा। तीन होते ही तुलना और तर्कों ने जन्म लिया- 'मैं ही क्यों?' 'बाकी दो क्या कर रहे हैं?' हर कोई दूसरे की पहल का इंतजार करता। नतीजा, मठ का जल-पात्र खाली रहने लगा।

एक रात दीपक की चिंगारी से मठ में आग लग गई।

तीनों जानते थे कि तर्कों और दोषारोपण का समय खत्म हो चुका है। बिना एक शब्द बोले तीनों एक शृंखला में खड़े हो गए- पहला घाटी से पानी भरता, दूसरा उसे ऊपर पहुंचाता और तीसरा आग पर उड़ेलता। कुछ ही घंटों में आग शांत हो गई। गति और सामंजस्य का ऐसा संतुलन उनमें पहले नहीं देखा था।

राख के बीच खड़े तीनों भिक्षुओं के चेहरों पर कालिख थी, लेकिन उन्हें यह समझ आ गया था कि लक्ष्य बिना स्पष्ट जवाबदेही के पूरे नहीं होते। साथ ही संकट की घड़ी में सामूहिक भावना से ही काम पूरे होते हैं। उस रात के बाद, तीनों बारी-बारी से पानी लाने लगे।

रोजनामचा



पं. राघवेन्द्र शर्मा
ज्योतिषाचार्य

स्कैन करें भविष्यफल और व्रत-त्योहार जानने के लिए

मेष : मन प्रसन्न रहेगा। आत्म विश्वास भी भरपूर रहेगा। नौकरी में तरक्की के मार्ग प्रशस्त होंगे। कार्यक्षेत्र में वृद्धि होगी। परिश्रम अधिक रहेगा। आय में वृद्धि होगी।

वृष : संयत रहें। अपनी भावनाओं को वश में रखें। पढ़ाई के कार्यों में व्यवधान आ सकते हैं। सचेत रहें। किसी मित्र के सहयोग से कारोबार में बदलाव हो सकते हैं।

मिथुन : मन प्रसन्न तो रहेगा। बातचीत में संतुलित रहें। सेहत का ध्यान रखें। किसी मित्र के सहयोग से आय वृद्धि के साधन बन सकते हैं। खर्चों में वृद्धि होगी।

कर्क : आत्मविश्वास भरपूर तो रहेगा। धैर्यशीलता में कमी रहेगी। संयत रहें। नौकरी में कार्यक्षेत्र में परिवर्तन हो सकता है। परिश्रम अधिक रहेगा। आय बढ़ेगी।

सिंह : मन परेशान रहेगा। संयत रहें। धैर्यशीलता बनाए रखने का प्रयास करें। कारोबार में वृद्धि होगी। लाभ में वृद्धि भी होगी। परिवार की सेहत का ध्यान रखें।

कन्या : आत्म संयत रहें। क्रोध के अतिरेक से बचें। पढ़ाई के कार्यों में सफलता मिलेगी। लेखनादि कार्यों से आय में वृद्धि हो सकती है। किसी पुराने मित्र से भेंट हो सकती है।

तुला : मन प्रसन्न रहेगा। आत्मविश्वास भी भरपूर रहेगा। नौकरी के परीक्षा व साक्षात्कार कार्यों में सफल रहेंगे। स्थान परिवर्तन के योग बन रहे हैं।

वृश्चिक : मन परेशान रहेगा। परिवार के साथ किसी धार्मिक स्थान पर जा सकते हैं। जीवन साथी की सेहत का ध्यान रखें। दस्त्रों व वाहन के रख-रखाव पर खर्च बढ़ेगे।

धनु : आत्मविश्वास में कमी रहेगी। संतान की सेहत का ध्यान रखें। नौकरी में तरक्की के मार्ग प्रशस्त होंगे। आय में वृद्धि होगी। मान-सम्मान की प्राप्ति भी होगी।

मकर : आत्म संयत रहें। बेकार के क्रोध से बचें। बातचीत में संतुलित रहें। किसी मित्र के सहयोग से किसी नए कारोबार की शुरुआत हो सकती है। लाभ के अवसर बढ़ेंगे।

कुंभ : मन परेशान रहेगा। संयत रहें। बेकार के क्रोध से बचें। नौकरी में परिवर्तन के योग बन रहे हैं। तरक्की के अवसर भी मिल सकते हैं। कार्यक्षेत्र में बदलाव हो सकता है।

मीन : आत्मविश्वास तो भरपूर रहेगा। धैर्य बनाए रखें। कारोबार में परिवर्तन की संभावना बन रही है। परिवार से दूर किसी दूसरे स्थान पर जा सकते हैं।

वर्गपहेली : 8479



बाएं से दाएं

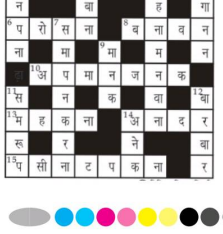
2. भाग्य का जोर मारना; भाग्य मुसकराना; (3,4)
6. कपड़े की बुनावट के धागे; बुनाई में सूत के धागे (2,2)
8. बिगाड़; विरोध; झंझट; झगड़ा (4)
11. अच्छी तरह से सुनना; एक-एक बात सुनना; ध्यान से सुनना (2,2,2,3)
15. पूरी तरह से; प्रत्यक्ष; बिल्कुल; साक्षात (4)
17. गलत तरीके से कमाया गया धन; घूसखोरी, चोरबाजारी (4)
18. तारीफ करना; प्रशंसा करना; बड़ाई करना (4,3)

ऊपर से नीचे

1. अंक सारिणी; अंक सूची; (2,3)
3. ऊपर सामान रखना, भार रखना (3)
4. झीना; पतला; बारीक; संकीर्ण; सूक्ष्म (3)
5. सर्पिणी (3)
7. घन; बदरा; बदली; मेघ (3)
9. भगिनी; सहोदरा (3)
10. अंदाज लगाना; अनुमान करना; कूतना; निश्चित करना; मूल्य लगाना; निशान लगाना (3)
12. चोचला; रूप अभिमान; हाव-भाव (3)
13. अच्छे शील वाली; विनीता; शीलवान; सरला; सुशील स्वभाव वाली (3)
14. अनजान होना; अबोध होना; मूर्ख होना (3,2)
15. भावपूर्ण; मधुर; मीठा; रसीला (3)
16. परामर्श; मशवरा; राय (3)
17. डरपोक; भीरु; कातर (3)

हरीश चन्द्र सन्सी, विविधा विधा, दिल्ली
(उत्तर अगले अंक में)

वर्गपहेली : 8478



सुडोकू : 8433

*कठिन

				3			5	4
		4	2					
	3		4	6				
5					3		8	7
	4						6	
8	1		9					3
				5	7		3	
					9	4		
1	8			2				

खेलने का तरीका : दिमागी खेल और नंबरों की पहेली है यह। ऊपर नौ-नौ खानों के नौ खाने दिए गए हैं। आपको 1 से 9 की संख्याएं इस तरह लिखनी हैं कि खड़ी और पड़ी लाइनों के हरेक खाने में 1 से 9 की सभी संख्याएं आएं। साथ ही 3×3 के हरेक बक्से में भी 1 से 9 तक की संख्याएं हों। पहेली का हल हम कल देंगे।

सुडोकू : 8432

4	6	7	8	5	3	1	9	2
5	1	9	2	8	7	4	3	8
3	8	2	9	1	4	7	5	6
1	4	6	3	9	2	5	8	7
2	9	5	1	7	8	3	6	4
8	7	3	6	4	5	9	2	1
6	5	8	7	3	1	2	4	9
7	2	4	5	8	9	6	1	3
9	3	1	4	2	6	8	7	5

व्रत और त्योहार | पंचांग | पं. ऋषुकांत गोस्वामी

12 अक्तूबर, सोमवार, शक संवत् : 20 आश्विन (सौर) 1948, पंजाब पंचांग : 26 आश्विन मास प्रविष्टे 2083, इस्लामः 30 रबि-उल्सानी, 1448, विक्रमी संवत् : आश्विन शुक्ल द्वितीया तिथि रात्रि 10.14 बजे तक पश्चात तृतीया तिथि, स्वाति रात्रि 11.53 बजे तक, विष्कुम्भ योग रात्रि 08.32 बजे तक पश्चात प्रीति योग, बालव करण, चन्द्रमा तुला राशि में (दिन-रात)।

सूर्य दक्षिणायन। सूर्य दक्षिण गोल। शरद ऋतु। प्रातः 07.30 मिनट से प्रातः 09 बजे तक राहुकालम्। चंद्रदर्शन।

वास्तु सलाह | आचार्य मुकुल रस्तोगी

जीवन में स्थिरता लाने के लिए करें ये वास्तु उपाय :

- शयन कक्ष उत्तर पश्चिम दिशा में न बनाएं। इस दिशा में सोने के बाद जीवन में स्टेबिलिटी नहीं मिल सकती। बेडरूम के स्थान को झाड़ू रूम न बनाएं। इस कारण बात में वजन नहीं रहता, साथ ही पूरा मान-सम्मान नहीं मिलता।
- एक्वेरियम उत्तर दिशा में रखें। दक्षिण पश्चिम दिशा के कमरे में अपना बेडरूम बनाएं।
- रविवार को छोड़कर नित्य पीतल के लोटे से पीपल पर जल अर्पित करें।
- संभव हो तो ईशान कोण में शाम को एक चांदी के दीपक में घी का दीया जलाएं या पीतल का दीपक भी ले सकते हैं। दीपक में थोड़ी हल्दी एवं चावल भी डालें।

लोकमानस

loksatta@expressindia.com

विरोधकांचा पराभव, इतकाच 'विजय'?

'हजारोंच्या धरपकडीतून संघर्ष तीव्र' ही बातमी (लोकसत्ता- ११ ऑक्टोबर) वाचली. दिल्लीतील जंतर-मंतर आंदोलनाच्या पार्श्वभूमीवर सात हजारांहून अधिक आंदोलकांना ताब्यात घेतल्याचे वृत्त. ही केवळ एका आंदोलनाची बातमी नाही; ती लोकशाहीतील असहमती, प्रशासनाची भूमिका आणि नागरिकांच्या अधिकारांबाबत विचार करायला लावणारी घटना आहे. लोकशाहीत निवडणुका जितक्या महत्त्वाच्या असतात, तितकाच महत्त्वाचा असतो त्या निवडणूक प्रक्रियेवरील जनतेचा विश्वास.

निवडणूक आयोगासारखी घटनात्मक संस्था ही लोकशाहीचा महत्त्वाचा आधारस्तंभ आहे. तिच्या निष्पक्षतेविषयी प्रश्न उपस्थित झाले, तर त्यांचे निरसन पारदर्शकपणे होणे अपेक्षित आहे. आंदोलकांचे सर्व आरोप योग्य आहेत, असे गृहीत धरणे जितके चुकीचे, तितकेच प्रश्न विचारणाऱ्यांना केवळ राजकीय विरोधक (किंवा सरळच 'अराजकवादी') नाकारणेही अयोग्य आहे. आरोपांची सत्यता पुराव्यांच्या आधारे ठरली पाहिजे; राजकीय सोयीच्या आधारे नव्हे.

आजचा खरा प्रश्न कोणता पक्ष जिंकला किंवा कोणता पक्ष हरला, हा नाही. प्रश्न आहे तो लोकशाही प्रक्रियेविषयी निर्माण होणाऱ्या शंकांना विश्वासार्ह उत्तरे मिळतात का, हा. कारण लोकशाहीची ताकद विरोधकांना गप्प करण्यात नसते; तर विरोधी मत ऐकून घेण्याची आणि स्वतःच्या निर्णयांचे समर्थन करण्याची संस्थांची क्षमता यात असते.

सार्वजनिक सुव्यवस्था राखणे हे पोलिसांचे कर्तव्य असले, तरी कायदा-सुव्यवस्थेच्या नावाखाली नागरिकांच्या लोकशाही अधिकारांवर अनावश्यक मर्यादा येणार नाहीत, याची काळजी घेणेही तितकेच आवश्यक आहे. अशाने आंदोलने थांबवता येतील, गर्दी पांगवता येईल आणि रस्ते मोकळे करता येतील; पण जनतेच्या मनातील शंका दूर करण्यासाठी पारदर्शकता, उत्तरदायित्व आणि विश्वासार्ह संवाद यांनाच पर्याय नाही. लोकशाही केवळ मतपेटीत जिवंत राहत नाही; ती नागरिकांच्या निर्भय प्रश्नांत, संस्थांच्या निष्पक्ष उत्तरांत आणि संविधानावरील सामूहिक विश्वासात जिवंत राहते.

आज गरज आहे ती संघर्ष अधिक तीव्र करण्याची नव्हे, तर सत्य अधिक स्पष्ट करण्याची. कारण लोकशाहीचा खरा विजय विरोधकांच्या पराभवात नसून जनतेच्या विश्वासाच्या विजयात असतो.

■ **योगेश संगीता महादेव जाधव**, पारनेर (अहिल्यानगर)

अवास्तव आरोपाला इतके महत्त्व?

'हजारोंच्या धरपकडीतून संघर्ष तीव्र' (लोकसत्ता- ११ ऑक्टो.) याच बातमीत 'अराजकता माजवण्याचा प्रयत्न - भाजपचा आरोप' असाही पोटमथळा दिसतो. अराजक कोण माजवत आहे या देशात?

डोळ्यांनी जे काही बघता येईल ते पाहिल्यानंतर व विवेकबुद्धी शाबूत असलेल्यांचा विश्वास कसा काय बसेल या आरोपावर? 'इंडियन एक्स्प्रेस'च्या स्वतःच्या व्हीडिओंमध्ये सत्ताधाऱ्यांचीच बर्बरता दिसते आहे, मग भाजपच्या या अवास्तव आरोपाला- तो पक्ष सत्ताधारी असला तरी- 'लोकसत्ता'ने इतके महत्त्व देण्याची गरजच काय आहे? या असल्या आरोपांना प्रसिद्धी मिळाल्याने जे आधीच भरडले जात आहेत त्यांच्या जखमांवर आणखी मीठ चोळले जाते!

■ **राम रेठे**, परतवाडा (जि अमरावती)

पोलिसी भेदभाव कोणाच्या इशाऱ्यावर?

दिल्लीमध्ये १० ऑक्टोबर रोजी आंदोलनादरम्यान पोलिसांनी मोठ्या प्रमाणावर आंदोलकांची धरपकड केली. मात्र, दुसरीकडे तथाकथित उजव्या विचारसरणीच्या संघटनांच्या कार्यकर्त्यांनी आंदोलकांना आणि पत्रकारांना मारहाण केल्याची घटनाही उघडकीस आली आहे. या मारहाणीचे व्हिडीओ समाजमाध्यमांवरही मोठ्या प्रमाणावर व्हायरल झाले आहेत. विशेष म्हणजे, काही ठिकाणी पोलिसांसमोरच आंदोलकांना मारहाण होत असल्याचे दिसते आहे. नंतर, या प्रकरणी चार जणांना अटक झाल्याची माहिती 'सूत्रां'नी दिल्याचे वृत्त आले.

लोकशाहीत आंदोलन करण्याचा अधिकार आहे, तसेच कायदा आणि सुव्यवस्था राखण्याची जबाबदारी पोलिसांची आहे. आंदोलकांची धरपकड करण्यासाठी तत्पर असलेले पोलीस मारहाण करणाऱ्यांना रोखण्यात तेवढेच तत्पर का दिसले नाहीत? कायद्याची अंमलबजावणी करताना आंदोलक आणि त्यांच्यावर हल्ला करणारे यांच्यात भेद केला जात असेल, तर तो कोणाच्या इशाऱ्यावर? सरकारचे हे कोणते धोरण? कायदा सर्वांसाठी समान आहे, हे केवळ सांगण्यासाठी आहे की प्रत्यक्षातही त्याची अंमलबजावणी होणार आहे?

■ **दीपक काशिराम गुंडये**, वरळी (मुंबई)

ज्ञानेश कुमार सरांनी संधी हुकवली!

मुख्य निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांनी २५ फेब्रुवारी २०२५ रोजी पदभार स्वीकारला. त्यांच्या कारकीर्दीत बिहारपासून मतदार याद्यांची विशेष सखोल फेरतपासणी मोहीम सुरू झाली आणि बिहार, केरळ, तमिळनाडू, पुदुचेरी, आसाम तसेच प.बंगाल या राज्याच्या विधानसभा निवडणुका पार पडल्या. आता विरोधकांचे म्हणणे आहे की 'ज्ञानेश कुमार यांनी मतचोरी करून मोदी सरकार सत्तेवर आणले!' मोदी सरकारला तिसऱ्यांदा विजय देणारी लोकसभा निवडणूक तर २०२४ सालीच झाली होती, त्यामुळे ज्ञानेश कुमार यांचा त्या निवडणुकीतून मोदी सरकारसंबंधात दूरान्वयानेही- काडीमात्र संबंध नाही. शिवाय, ज्ञानेश कुमारांनी एसआयआर अमलात आणल्यानंतर केरळमध्ये काँग्रेसप्रणीत सत्ता आली; तर तामिळनाडूमध्ये भाजपविरोधी टीव्हीके पक्ष सत्तेवर आला तिथे फक्त ज्ञानेश कुमार यांनी मतचोरी केली नाही. विरोधकांच्या मते तो लोकशाहीचा विजय! उरलेल्या चार विधानसभांत विरोधकांचा धुव्वा उडाला तिथेच फक्त ज्ञानेश कुमारांनी मतचोरी केली. त्यामुळे माझे मुख्य निवडणूक आयुक्तांना एक सांगणे आहे की सर, तुम्ही विरोधी पक्ष निवडून आलेल्या केरळ आणि तमिळनाडूमध्ये जर मतचोरी करून तेथे भाजपला विजयी केले असते तर विरोधी पक्ष उजळ माथ्याने तुमच्या नावाने बोंबाबोंब करून त्यांचे म्हणणे शंभर टक्के खरे आहे असेच जनतेला म्हणाले असते, तुम्ही त्यांची संधी हुकवली!

■ **अजित परमानंद शेटये**, डोंबिवली पूर्व

संवादच नाकारणारा दुटप्पीपणा

कायदा हातात घेऊन दुसऱ्या धर्माचे धर्मस्थळ पाडून आपल्या धर्माचे धर्मस्थळ उभारण्यासाठी देशव्यापी हिंसक चळवळ विरोधी पक्षात असताना उभी करणारे आता सत्तेत आल्यावर तरुणांच्या काही विशिष्ट जागांवरील आंदोलनांना देशात अराजकता माजविण्याचा प्रयत्न म्हणत आहेत (अराजकता माजविण्याचा प्रयत्न, भाजपचा आरोप, लोकसत्ता ११ ऑक्टोबर). याआधीही विरोधी पक्षात असताना रुपयाच्या घसरणीने देशाची जगभरात नाचक्की होत आहे म्हणणारे सत्तेत आल्यावर रुपया कमकुवत नाही तर डॉलर सशक्त झाला आहे असे म्हणू लागले होते; संसद चालवणे हे तर सरकारचे काम आणि गोंधळ घालून कामकाज बंद पाडणे हा विरोधी पक्षांचा जन्मसिद्ध हक्क या आविर्भावात वावरणारे सत्तेत आल्यावर मात्र विरोधकांमुळे कसा संसदेचे तास आणि करदात्यांच्या निधीचा अपव्यय होत आहे हे मोठ्यामोठ्याने ओरडून सांगू लागले. आणि ही फक्त दुटप्पीपणाची उघडउघड कुणालाही दिसतील अशी उदाहरणे. इतरांची ती अराजकता आणि आमचे ते सर्व रामराज्यच असे एकदा ठरवूनच टाकले की लोकशाहीतील खुल्या संवादाला वावच उरत नाही आणि म्हणून लोकशाहीची आणि पर्यायाने देशाची प्रगती मंदावण्याचा धोका संभवतो, असे वाटते.

■ **प्रवीण नेरुरकर**, माहीम, मुंबई

बदल झाले, तरच आशा आहे...

'ये कहाँ आ गये हम...' या लेखातून मराठी तरुण सध्या करतात तरी काय हा ज्वलंत प्रश्न उपस्थित होतो. प्रत्यक्षापासून फारकत घेऊन स्वप्नरंजनात मशगूल झालेला सध्याचा आपला समाज आहे. त्यात दुर्दैवाने तरुण अधिक आहेत. चुकीच्या आणि दूरदृष्टी नसलेल्या राजकीय धोरणांमुळे नैराश्यात असलेल्या तरुणाला बेरोजगारी असूनही इतर सामाजिक, राजकीय, धार्मिक कार्यक्रमांमध्ये गुंतवले जात आहे. अगदी शेती कामापासून उच्चपदस्थ हुद्द्यांवर अमराठी लोकांचा वरचष्मा वाढीस लागला आहे. हे सगळे बदलायचे असेल तर शासकीय पातळीवर आमूलाग्र आणि धाडसी धोरणे राबवून, मराठी भाषक तरुणांना विविध संधी उपलब्ध करून द्याव्या लागतील. ग्रामीण भागात सामाजिक व्यवस्थाही बदलायला हवी जेणेकरून आपापल्या गावातच तरुणाला कोणताही व्यवसाय विश्वसनीय आणि सन्मानकारक वाटेल. सर्व क्षेत्रांत मराठी लोकांना प्राधान्य असावे यासाठी शिक्षणव्यवस्थेत प्राधान्याने बदल करायला हवा (पण आपण मात्र हिंदीसक्ती पाहातो). शासनकर्त्यांना सर्व गोष्टी करणे सहज शक्य आहे गरज आहे फक्त दूरदृष्टी असणाऱ्या इच्छाशक्तीची.

■ **डॉ. शशांक फापाळे**, ओतूर (ता. जुन्नर, जि. पुणे)

राम तेरी गंगा...

कालबाह्य रूढी सोडून धर्म पुढे आले, तर नदीला कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व देण्याचीसुद्धा कदाचित गरज पडणार नाही. धर्मच नदीचं संरक्षण आणि संवर्धन करेल...



चित्ततोष खांडेकर
नदी विषयक संशोधक अभ्यासक
chittatoshresearch@gmail.com

नदीकारण

नदीला देवत्व देऊन नंतर कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व आणि हक्क देण्याची आगळीवेगळी न्यायालयीन क्लृप्ती आपण मागच्या लेखात समजून घेतली. पण देवत्वाच्या समस्या काय? त्यांच्यावर काही तोडगा आहे का? तसंच लोकचळवळी आणि सरकार यांची नदीहक्कांबद्दल काय भूमिका आहे?

याची चर्चा या लेखात करण्याआधी धर्माची सर्वमान्य व्याख्याही पाहू - जो धारण केला जातो तो धर्म. (यः धारयति इति धर्मः) जगण्यातले आचार, विचार, चांगल्या-वाईटाचे नियम, नीतिमत्ता हे सारंच धर्म म्हणून ओळखलं जातं. पण मानवी जीवन मात्र कालपरत्वे बदलत असतंच. तंत्रज्ञानाचे शोध लागत जातात तसे नवीन रोजगारही जन्माला येतात. छपाईयंत्र ते एआय इतका मोठा टप्पा मानवानं गाठला, तशी त्याच्या जगण्याची संसाधनंही बदलत गेली. पण त्यानुसार जगण्याची पद्धती आणि ती कशी असावी हे सांगणारा धर्म बदलला का?

बदल हाच शाश्वत आहे असे भारतीय धर्मवेत्ते सांगत. 'जगन्मिथ्या' ही उपनिषदातील संकल्पना, जग हे तात्पुरतं आहे असं म्हणताना जगात सतत बदल होत राहाणं हेच तर शाश्वत मानलं गेलं. जग घडलेलं नाही, तर सतत घडतं आहे- बदलतं (अनित्य) आहे, हेच तर तथागत गौतम बुद्ध सांगतात. घडलेलं, घडणारं आणि घडत जाणारं, काहीच मानवाच्या हातात नाही तर त्याला सामोरं जाणं आणि त्यानुसार स्वतःत बदल करत राहाणं हेच त्याला क्रमप्राप्त आहे, हे आजीविकांचे तत्त्वज्ञान आहे. जर काळानुरूप बदलणं हेच शाश्वत आहे, तर मग ते अनेक प्रथा, परंपरांना लागू होत नाही का?

नदीच्या 'देवत्वा'बाबतीतली हीच सगळ्यात मोठी समस्या आहे. नर्मदा देवी आहे म्हणून तिला दूध वाहायची परंपरा आहे. पण नदीच्या पूजेसाठी शेकडो लिटर दूध नदीत वाहिलं जातं, त्यानं नदीच्या होणाऱ्या प्रदूषणाचं काय? गंगा-गोदावरीकाठी होणारे कुंभमेळे अतिप्राचीन असतीलही; पण आज सर्वच सण- उत्सव वा पर्वांचे भांडवली इव्हेंट झाले आहेत. कोट्यवधींची गर्दी कुंभमेळा नावाच्या 'वैराग्याच्या' सोहळ्याला आली, त्यातून गंगेत 'एस्चेरिया कोली' या घातक बॅक्टेरियाचे प्रमाण वाढल्याचं वृत्त मागच्यावर्षी आलं. तसंच अनेक सणांना नदीकाठी पूजेला लोक येतात, पण पूजा झाल्यावर प्लास्टिकसुद्धा निर्माल्यासह नदीतच फेकतात. ज्या प्रथा नदीला नमन आणि कृतज्ञता व्यक्त करण्यासाठी जन्माला आल्या त्याच सर्वात कृतघ्न ठरताना दिसत आहेत; तर या प्रथा बदलायला नकोत का? नदी ही देवता आहे ही न्यायालयाची भूमिका योग्य असेलही; पण देवत्वासह येणाऱ्या या जीर्ण प्रथांबद्दल न्यायालयाचं मत काय? त्या बदलण्यासाठी न्यायालय काय मार्ग सुचवतं?

प्रश्न इथंच संपत नाहीत. रोजचं सांडपाणी, कारखान्यातून सोडला जाणारा कचरा, वाळू खनन यांतून नदीसाठी तयार करण्यात येणाऱ्या समस्या खूप भीषण आहेत, त्यापुढे हे सणांमुळे होणारं प्रदूषण काहीच नाही, असा युक्तिवाद कोणी करेलही. तो योग्यही आहे. आधुनिकतेनंतर झालेलं औद्योगिकीकरण, वाढणारी लोकसंख्या, हे सगळे प्रश्न खरोखरच नदीच्या दृष्टीनं भीषण आहेत. मग नदीला देवत्व देऊन या समस्यांवर काही उत्तर मिळेल का? त्यासाठी न्यायालयांत धाव घेता येईल का? या साऱ्याबद्दल न्यायालय ताम्रभरणी नदीच्या वा इतर खटल्यांत मौन बाळगतं. नदीचं प्रदूषण कमी करण्यासाठी देवत्व आणि कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व द्यावं, यापलीकडे न्यायालय फारसं जात नाही. तसंच धरणं, उपसा-सिंचन, अनियमित वाढणारी शहरं... इतकंच कशाला नदी सुशोभीकरण (रिव्हरफ्रंट डेव्हलपमेंट) सारख्या प्रकल्पांतूनही नदीची हानी होते. या प्रकल्पांमध्ये राज्यसंस्थेचा थेट सहभाग असतो. मग त्याबाबतीत देवत्व वा कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व दिल्यास काय बदल होतील?



मोहम्मद सलीम खटल्यात उच्च न्यायालयानं पर्यावरण सचिवांनाच नदीचे राखणदार (गार्डियन) बनवलं, नदीच्या संवर्धनाची जबाबदारीच त्यांच्यावर दिली. मात्र याला सर्वोच्च न्यायालयानं स्थगिती दिली, त्यामुळे कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व देऊन राज्यसंस्थेवर काय चाप बसेल, हा प्रश्नही अजून निरुत्तर करणाराच. पण मग सरकार या दृष्टीनं काय पावलं उचलते आहे?

मध्य प्रदेश विधानसभेत नर्मदेला नदीहक्क देण्याचं एक विधेयक मांडलं गेलं, पण मंजूर झालं नाही. राज्यसभेतले खासदार आणि चंडीगढ विद्यापीठाचे कुलपती सतनाम सिंग संधू यांनीही ७ फेब्रुवारी २०२५ रोजी '४० कि. मी. पेक्षा जास्त लांबीच्या सर्व नद्यांना कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व द्या, त्यानुसार काही हक्क द्या,' अशा आशयाचं विधेयक राज्यसभेत मांडलं. ते 'सदस्यांचं वैयक्तिक विधेयक' म्हणून त्यावर संसदेत साधी चर्चाही झाली नाही. मग नदीला धर्मात आणि संस्कृतीत अनन्यसाधारण महत्त्व असूनही राज्यसंस्था त्याबद्दल इतकी उदासीन का? याबद्दल न्यायालय तरी आपल्या निकालांत सरकारला काही सूचना का करत नाही? संविधानातल्या अनुच्छेद १४२ नं न्यायसंस्थेला वापर करत 'देवत्व' राखण्याची काही मार्गदर्शक तत्त्वं का देत नाही?

देवत्वाबद्दलची तिसरी समस्या सामाजिक आहे. जिथं देवत्व येतं तिथं पावित्र्य आणि शुद्ध-अशुद्धतेच्या संकल्पनाही आल्याच. देवाच्या मंदिरात सगळ्यांनाच प्रवेश थोडाच होता? तेच नद्यांच्या बाबतीतही ओघानं आलं. नदीच्या वरच्या अंगाचं स्वच्छ पाणी घेण्याचा अधिकार तथाकथित अस्पृश्य समाजांना होता का? नदीवरचे पवित्र ओहोळ, धबधबे, आरतीचे काठ अशा ठिकाणी त्यांची सावली पडण्यासही बंदी होती. डॉ बाबासाहेब आंबेडकरांचा चवदार तळ्याचा सत्याग्रह या साऱ्या प्रथांविरोधात प्रातिनिधिक होता. हाच प्रश्न मासिक पाळी आलेल्या महिलांनाही लागू होता. जगातल्या बहुतेक सर्वच धर्मांमध्ये थोड्याफार फरकानं या काळात महिलांना धार्मिक कार्य करणं, देवाजवळ जाणं अशा कृतींना मज्जाव करण्यात आला आहे. महिलांना या काळात अपवित्र वा अशुद्ध मानलं गेलं आहे. मग देवत्व दिल्यावर नदीची पूजा बांधायला या महिला नदीवर जाऊ शकतील? देवत्वासह येणाऱ्या या सामाजिक समस्यांचा ऊहापोह न्यायालय कुठेच करत नाही, किंवा या साऱ्या समस्या सोडवणारी, नदीच्या देवत्वाची 'समता आणि संवर्धना'वर आधारित एक नवी संकल्पनाही देत नाही.

देवत्वाची संकल्पना नदीच्या जगण्याचा आणि लोकांना जगवण्याचा अधिकार मान्य करते, हे तिचं सर्वात मोठं यश. त्यामुळे देवत्व देऊन कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व देणं, ही भूमिका ऐतिहासिकदृष्ट्या महत्त्वाचीच आहे. पण त्यासोबत येणाऱ्या समस्यांचं काय? भविष्यात या साऱ्याचा विचार करून न्यायालयानं निर्णय दिले आणि नदीचं संरक्षण-संवर्धन झालं, तर त्याचं स्वागत असेल.

हे झालं न्यायालयांचं. पण जिथून देवत्वाची संकल्पना उदयास येते त्या धर्मसंस्कृतींचे काय? उत्तर सोपं आहे. बदलच मानवी जीवनात शाश्वत आहे ही भारतीय धर्मांच्या तत्त्वज्ञानातली प्रमुख संकल्पना आहे; तर त्यानुसारच नदीप्रति कृतज्ञता व्यक्त करण्याचे मार्ग बदलायला हवे. तिच्या पूजेतून तिचं संवर्धन आणि संरक्षण व्हायला हवं, भंजन नव्हे. कालबाह्य रूढी सोडून धर्म पुढे आले, तर नदीला कायदेशीर व्यक्तिमत्त्व देण्याचीसुद्धा कदाचित गरज पडणार नाही. धर्मच नदीचं संरक्षण आणि संवर्धन करेल : हेच भारतातल्या लोकचळवळींचं म्हणणं आहे.

नदीचं देवत्व वैश्विक आणि सर्वसमावेशक व्हावं. नदीचे राखणदार होणं ही समाजाची सामूहिक जबाबदारी झाली, तर भांडवलदार असो वा राज्यसंस्था - कोणीही नदीचं नुकसान करू शकणार नाही. त्यामुळे 'लोकसहभागातून, सामूहिक कृतींतूनच नद्यांचे प्रश्न सुटतील, कायद्याच्या बडग्यानं नाही' अशी लोकचळवळींची भूमिका आहे. म्हणूनच, नदीहक्कासाठी लढण्याऐवजी लोकसहभागावर त्यांचा भर जास्त आहे.

नदीहक्कांचे जागतिक आणि भारतीय परीघ आपण आतापर्यंत समजून घेतले. तसंच पर्यावरण, तत्त्वज्ञान, प्रशासन, राजकारण आणि लोकचळवळीतून जन्माला येणारं नदीकारण आपण जाणलं. पण नदीकारण इतिहास कसा घडवतं? हे अजून पाहिलेलं नाही. यावर पुढच्या लेखापासून हे सदर प्रकाश टाकेल.

कुतूहल

शीतपेयांमध्ये बुडबुडे का येतात?

आपल्यापैकी बऱ्याचजणांना शीतपेयं आवडत असतील. शीतपेय पिताना, आपल्या चेहऱ्यावर उडणारे त्या पेयाचे तुषार आपल्यापैकी अनेकांनी अनुभवले असतील आणि शीतपेयाच्या बाटलीत तयार झालेले छोटे छोटे चमकदार बुडबुडेही सर्वांनी पाहिले असतील.

कारखान्यात शीतपेयं तयार करताना इतर घटकांबरोबरच पाण्यात बऱ्याच प्रमाणात कार्बन डायऑक्साईड वायू भरतात. वायू पाण्यात भरत असताना त्यावर मोठ्या प्रमाणात दाब द्यावा लागतो. यंत्राच्या मदतीनं दाब देऊन वायू भरल्यानंतर वायू निसटून जाऊ नये म्हणून बाटली घट्ट झाकणानं बंद करतात. बंद बाटलीतल्या दाबामुळे कार्बन डायऑक्साईड वायू पाण्यात विरघळतो. विरघळलेल्या अवस्थेत असल्यामुळे त्याचं अस्तित्व आपल्याला जाणवत नाही.



थंडाव्यामुळे शीतपेयातल्या कार्बन डायऑक्साईड वायूच्या रेणूंची हालचाल मंदावते. शीतपेयाचेही रेणू आकुंचन पावतात. त्यामुळे वायूचे रेणू पेयामध्ये दाटीवाटीने भरून राहातात. शीतपेय फ्रीझमधून बाहेर काढलं की त्याचं तापमान वाढल्यामुळे, वायूच्या रेणूंची हालचाल जलद व्हायला लागते. शिवाय तापमान वाढल्यामुळे पेयाचे रेणू आणि वायूचेही रेणू प्रसरण पावायला लागतात. त्यामुळे वायूचे रेणू एकमेकांपासून दूर जाण्याचा प्रयत्न करतात.

आता कार्बन डायऑक्साईड वायूला पाण्यात राहायचं नसतं. तो शीतपेयाबाहेर पडण्यासाठी धडपडू लागतो. वायू असल्यामुळे त्याचे छोटे छोटे बुडबुडे तयार व्हायला लागतात. पण बुडबुडा बनायला त्याला छोटासा आधार लागतो. शीतपेय ज्या बाटलीमध्ये किंवा ग्लासमध्ये असेल, त्याच्या काचेवरील बारीक ओरखड्यांच्या आधारानं तिथं वायू जमा व्हायला लागतो आणि छोटा बुडबुडा तयार होतो. हळूहळू तो बुडबुडा मोठा व्हायला लागतो, वर तरंगतो आणि टचकन फुटतो.

जर आपण शीतपेयाच्या बाटलीचं झाकण पटकन उघडलं, तर 'फस्स्स' असा आवाज येतो. झाकण एका दमात उघडलं गेल्यामुळे बाटलीतला दाब अचानक कमी होतो. शीतपेयात दाबून राहिलेला वायू दाब गेल्यामुळे एकदम उसळी मारून पेयाबाहेर पडतो. पेयाला खूप फेस आल्यासारखं होतं. वायूचे रेणू काही क्षणातच जास्त दाबाकडून कमी दाबाकडे प्रवास करतात आणि फेस बाटलीबाहेरही पडतो.

काही प्रमाणात कार्बन डायऑक्साईड विरघळलेल्या अवस्थेतच राहिल्यामुळे, पेय ॲसिडिक म्हणजेच आम्लधर्मी होतं, म्हणूनच ते थोडं आंबट लागतं.

आपल्यापैकी बरेच जण शीतपेयाची बाटली उघडण्याआधी हलवतात. बाटली उघडण्याआधी हलवली तर बाटली उघडायच्या आधीच बाटलीमध्ये हजारो छोटे बुडबुडे तयार होतात. झाकण उघडलं की सगळ्या वायुला बाहेर पडायला लगेच वाट मिळते. म्हणून पेय कारंज्यासारखं बाहेर येतं.

बऱ्याचदा पाणी भरलेल्या ग्लासमध्येही असे छोटेसे बुडबुडे तयार झालेले दिसतात; ते मात्र निसर्गतःच पाण्यात विरघळून राहिलेल्या हवेचे असतात.

– नीलम प्रभू
मराठी विज्ञान परिषद
ईमेल : office@mavipa.org
संकेतस्थळ : www.mavipa.org

व्यक्तिवेध

इटलीतल्या ट्रीस्टे इथली 'इंटरनॅशनल सेंटर फॉर थिओरेटिकल फिजिक्स' ही संस्था आणि बर्लिनची 'इंटरनॅशनल मॅथेमॅटिकल युनियन' या दोन संस्था तसेच काही प्रमाणात भारत सरकार यांच्यातर्फे विकसनशील देशांतल्या तरुण गणितज्ञांना २००५ पसून दिले जाणारे १० हजार अमेरिकी डॉलरचे 'रामानुजन युवा गणितज्ञ पारितोषिक' यंदा महेश काकडे यांना घोषित झाले. हे महेश काकडे मूळचे अकोल्याचे. बेंगळूरुमधल्या 'इंडियन इन्स्टिट्यूट ऑफ सायन्स'मध्ये त्यांनी उच्चशिक्षण घेतले; मग केम्ब्रिजमध्ये शुद्ध गणिता'त (प्युअर मॅथेमॅटिक्स) संशोधन करून, ब्रिटनमध्येच काही काळ शिकवून बेंगळूरुच्या याच ११७ वर्षांचा इतिहास असलेल्या संस्थेत अध्यापन-संशोधन करण्यासाठी ते परत आले. 'प्युअर सायन्सेस' - मग ते गणित असो वा भौतिकशास्त्र- लगेच समाजाच्या उपयोगी पडत नाही, म्हणून भारतासारख्या विकसनशील देशांत त्यांकडे दुर्लक्ष होते, असा आरोप नेहमीच केला जातो. पण काकडे हे 'रामानुजम पारितोषिक' मिळवणाऱ्या पाचवे भारतीय ठरले आहेत. अर्थात, आतापर्यंतच्या २२ मानकऱ्यांपैकी ब्राझीलच्या पाच विजेत्यांशी आपल्या गणितज्ञांनी बरोबरी केल्याचे एक (फसवे) समाधान, तर 'विकसनशील देशां'मध्ये चीनचा समावेश असूनही आजवर चारच चिनी गणितज्ञांना हे पारितोषिक मिळाल्याचे दुसरे समाधानही फसवेच!



महेश काकडे

डॉ. महेश काकडे यांच्याबद्दलचा आदर आणि कौतुक बावन्नकशी असूनसुद्धा 'आपल्या देशाची शान वाढली' असा दिलासा शोधणारी ही दोन्ही समाधाने फसवी ठरण्याचे महत्त्वाचे कारण म्हणजे या पारितोषिकाच्या निमित्ताने काकडे यांच्या नेमक्या कार्याकडे लक्ष जाण्याची चिन्हे फार कमी. लक्ष द्यायचे ठरवले तरी, इंग्रजीखेरीज अन्य भारतीय भाषांतून त्यांच्या कामाचे मर्म समजावून सांगणे अवघड. काकडे हे अंकसिद्धान्ताचे ('नंबर थिअरी'चे) अभ्यासक. नंबर थिअरी हा पूर्णांकांचा अभ्यास. आंतरराष्ट्रीय पातळीवर दखल घेतले गेलेले आणि अनेक शोधनिबंधांत ज्याआधारे चर्चा झाली असे त्यांचे संशोधन हे 'इवासावा कन्जेक्चर'बाबतचे. अंकशास्त्रातले हे अनुमान (म्हणजे, जो मांडणाऱ्याने सिद्ध केला नाही, असा अपूर्ण सिद्धान्त किंवा तर्क) आधी 'गाल्वा क्षेत्रा'च्या सिद्धान्ताचा संदर्भ इथे कसा येतो, हे कळल्याखेरीज समजून घेता येत नाही आणि गाल्वा समजण्यासाठी आधी रेषीय बीजगणित उमगावे लागते. त्यामुळे 'अन्य संशोधकांपेक्षा निराळी पद्धत वापरून इवासावा अनुमान सिद्ध करणारे नवे प्रमेय महेश काकडे यांनी मांडले' म्हणजे नेमके काय केले, हे कळण्यासाठी आधी ॲण्ड्र्यू वाइल्स, बॅरी मॅझूर, कार्ल रुबिन आदी अभ्यासकांनी काय केले होते हेही माहीत असावे लागते!

या जटिल अभ्यासात रस घेणाऱ्यांची संख्या भारतातही वाढवण्यासाठी महेश काकडे हे स्वतःदेखील प्रयत्न करताहेत, हे विशेष. इयत्ता दहावीच्याही आधी त्यांनी 'रस वाटला म्हणून' या शास्त्राबद्दलचे 'एलिमेंटरी नंबर थिअरी' हे पुस्तक वाचून काढले होते. रस असेल, तर हे समजून घेता येते हा त्यांचा स्वानुभव इथे कामी येतोच. पण यूट्यूबसारख्या माध्यमांचा वापर करून, अंकशास्त्रातल्या मूलभूत संकल्पना किंवा 'डायोफँटाइन समीकरण' सारख्या विशेष कल्पना माहीत असलेल्या विद्यार्थ्यांना ते या संकल्पनांची सखोलता नेमकी समजावून देतात!

राजवाडे विचारविश्व

'कस्तुरीपरीक्षा' ते 'ज्योतिषरत्नमाला'...

राजवाड्यांनी प्रकाशात आणलेल्या काही मोजक्याच शिलालेखांची व ताम्रपत्रांची संक्षिप्त ओळख करून घेतल्यावर आता त्यांनी शोधलेल्या काही मराठी ग्रंथांची व ग्रंथकारांची ओळख करून घेऊ.

त्यांच्या अतिव्याप्त कार्यामध्ये तुलनेने दुर्लक्षित किंवा उपेक्षित राहिलेल्या या पैलूचे महत्त्व सहज लक्षात यावे म्हणून 'समग्र राजवाडे साहित्या'च्या 'मराठी ग्रंथ व ग्रंथकार' या दुसऱ्या खंडाचे संपादक श्रीधर रंगनाथ कुलकर्णी यांच्या प्रस्तावनेतील काही वाक्ये उद्धृत करावीशी वाटतात. त्यांनी लिहिले आहे, 'कोळशाच्या खाणीला अगदी पहिली कुदळ लावल्यानंतर हिरा हाती लागतोच, असे नाही. भूगर्भात असलेले मातीचे अनेक थर दूर सारल्यानंतर कोळशाची चाहूल लागते. या सारासारीत हिरा निघाला आणि पारखणारी नजर नसेल, तर सारेच कोळसे होतात... मराठी साहित्यातले अमोल रत्न अगदी पहिला मराठी ग्रंथ राजवाड्यांच्या हाती लागण्यापूर्वी त्यांना कितीतरी गद्य हस्तलिखिते बाजूला सारून वाट काढावी लागली... त्रुटित (=अर्धवट) वैद्यक ग्रंथाप्रमाणेच ज्योतिषविषयक लहानमोठी टिपणे, मंत्रशास्त्राशी संबंधित असलेली प्रकरणे, सामुद्रिकाची माहिती देणारे (सुटे) कागद, वैद्यक व जादूटोणा यांनी संमिश्र असणारे अर्धवट ग्रंथ, गणितविषयक टिपणे... वगैरे वगैरे असे बरेच काही राजवाड्यांच्या हाती आले, येत राहिले आणि संशोधनाच्या त्या यात्रेत हाती आलेला कोणताही कागद राजवाड्यांनी कधीही टाकाऊ मानला नाही...'

राजवाड्यांच्या या स्वभाववैशिष्ट्याचे अगदी टोकाचे उदाहरण म्हणून या खंडामध्ये समाविष्ट असलेला ३७ क्रमांकाचा उतारा पाहण्यासारखा आहे. कस्तुरीची परीक्षा कशी करावी, हे सांगणारे वहीचे सुटे पानही राजवाड्यांनी दुर्लक्षित केले नाही. 'अथ कस्तुरीपरीक्षा' अशा शीर्षकाखालील या पाच ओळी... 'जिचा केतकी ऐसा परिमळ। वर्ण पीत। स्वाद तिखट कि कडवट। तुके हाळु।। मर्दिता चिकण।। जाळितां भस्म होय।। चर्मगंध ये।। चिटचिटी अंगावरि घालिता। चिमचिमी हातात मुहूर्त, धरिजे।। पाणी घालून भिजु दीजे।। भिजलीया आरक्त होये।। अथवा पिवळी होए।... यया गुणी असे ते शुध्धोत्तम मृगनाभिची जाणावी। ये परीक्षेविरहित ते करणीची जाणावी ऐसी परीक्षा असे।। जाणिजे।।...' गंधशास्त्राशी संबंधित प्राचीन गद्याचा नमुना म्हणून हा एवढासा छोटा पण महत्त्वाचा मजकूर त्यांनी उतरवला, जपला, छापलाही!

आणि दुसरे मोठ्ठे उदाहरण म्हणजे 'ज्योतिषरत्नमाले'वरील मराठी टीका. कठोर तपश्चर्येनंतर श्रीपतिभट्ट विरचित या टीकेची अपूर्ण प्रत राजवाड्यांच्या हाती लागली. प्रत अपूर्ण असली, तरी तिचे मोल त्यांच्या रत्नपारखी नजरेने ओळखले आणि पूर्ण प्रत गवसण्याची प्रतीक्षा करीत न बसता भारत इतिहास संशोधक मंडळाच्या १९१३-१४ सालच्या वार्षिक अहवालात समाविष्ट करून ती प्रसिद्धही केली. त्यासोबत माहिती देताना त्यांनी लिहिले, 'नेवासे येथील जोशांच्या पोथ्यांत ही त्रुटित पोथी मला सापडली. सबंध पोथीची एकंदर पृष्ठे किती असतील, ते सांगता येत नाही. मला फक्त ३७ पाने म्हणजे ७४ पृष्ठे सापडली आहेत. एकपासून सदतीसपर्यंत सर्व पाने शाबूत आहेत. पानांचा रंग पिवळासावळा झालेला असून जीर्णत्वामुळे पाने ठिसूळ झाली आहेत. दरपृष्ठास सामान्यतः नऊ किंवा दहा ओळी आहेत. अक्षर शालिवाहनशकाच्या चौदाव्या शतकांतील बालबोध आहे...'

नंतर राजवाड्यांनी भारतीय ज्योतिषशास्त्राचा इतिहास लिहिणारे शंकर बाळकृष्ण दीक्षित यांच्या हवाल्याने श्रीपती हा शके ९६१च्या सुमारास झाल्याचे सांगितले आणि पुढे लिहिले, 'या पोथीत मूळ ग्रंथ संस्कृतात आहे व टीका मराठी आहे. टीका दुसऱ्या कोणी केलेली नाही, खुद्द स्वतः श्रीपतीनेच केली आहे. टीकेत श्रीपती दोनदा खालीलप्रमाणे प्रतिज्ञा करतो.

टीका प्रथम श्लोक

।। तेया ईश्वररूपा कालातें मि
ग्रंथुकर्त्ता श्रीपति नमस्कारी ।।
टीका द्वितीय श्लोक
।। मी श्रीपति रत्नाचि
माळा रचितों।।

या दोन उल्लेखांवरून स्पष्ट आहे की श्रीपतीने रत्नमाला हा ग्रंथ मूळ संस्कृतात लिहिला व त्याची टीका किंवा त्याचा अर्थ त्यानेच स्वतः मराठीत दिला...'

– आनंद हर्डीकर
anand47.hardikar@gmail.com

जंतर-मंतर-अंतर!

मिळेल त्या मार्गाने या आंदोलनास आणि त्याहीपेक्षा आंदोलकांस चिरडण्याचा प्रयत्न सरकारने केला. तो दोन प्रकारे अंगाशी आला...

सर्वप्रथम सर्वोच्च न्यायालयाचे आभार. हे आभार नागरिकांच्या निदर्शनांच्या अधिकारावर गदा आणण्याचा सरकारचा प्रयत्न त्यांनी तूर्त हाणून पाडला; यासाठी. झुरळ या far-fetched नामाच्या सजीवास राष्ट्रीय चर्चेच्या केंद्रस्थानी आणले गेल्यानंतर या झुरळांच्या जगण्याच्या, अभिव्यक्तीच्या अधिकारांचे रक्षण करणे हे सर्वोच्च न्यायालयाचे कर्तव्य होते. ते त्यांनी पार पाडले. हा सर्वांधिने आंदोलकांचा विजय. काँक्रीट जनता पार्टीच्या 'पोट्ट्यांना' रोखण्यासाठी देशाच्या राजधानीत ४० हजार सुरक्षा रक्षक तैनात करावे लागत असतील आणि रविवारी, सुट्टीच्या दिवशी सर्वोच्च न्यायालयास विशेष बैठक बोलावून मेट्रो/रेल्वे/ रस्ते/ इंटरनेट वाहतूक सुरळीत व्हायलाच हवी असे सरकारला बजावण्याची वेळ येत असेल तर यातून 'झुरळांचे' आंदोलन अत्यंत यशस्वी ठरले हे आणि हेच वास्तव दिसून येते.

मुख्य निवडणूक आयुक्त श्रीमान ज्ञानेश कुमार यांच्या राजीनाम्याच्या मागणीसाठी राजधानीतील 'जंतर मंतर' येथे आंदोलन करण्याची हाक 'सीजेपी'ने दिली आणि त्यास अपेक्षेप्रमाणे चांगला प्रतिसाद मिळाला. पण तो अभूतपूर्व ठरला. कारण या संभाव्य आंदोलनाच्या पराभवासाठी सरकारने राबवलेले विषम उपाय. वास्तविक सर्वोच्च न्यायालयाने या संदर्भात सरकारला मर्यादांची जाणीव करून दिलेली होती. ''माशी मारण्यासाठी कोणी हातोडा हाणत नाही'', हे सर्वोच्च न्यायालयाचे या संदर्भातील उद्गार. पण खिळा लहान असो की मोठा, माशी की मच्छर विद्यमान सरकारला हातातील हातोडा उगारण्याचा मोह काही आवरत नाही. सामर्थ्याचे महत्त्व संयमात असते. संयतवृत्ती सामर्थ्यास अधिक समर्थ बनवते. पण हा विवेक असल्याचा पुरावा विद्यमान सरकारने दर्शवलेला नाही. एखाद्या गुन्हेगाराचे घर शासकीय अधिकारांचे बुलडोझरी प्रदर्शन करत पाडणे हे या सरकारचे वारंवार प्रदर्शित पुरुषार्थ दर्शन. त्याचे विकृत तांडव 'सीजेपी' आंदोलन मोडून काढण्याच्या मिषाने दिल्लीत दिसून आले आणि ते साऱ्या जगाने पाहिले. अगदी 'संयुक्त राष्ट्र मानवी हक्करक्षण आयोगा'स त्याची दखल घ्यावी लागली. हे 'लोकशाहीच्या जननी'स खचितच अशोभनीय. जे झाले ते पाहता सरकारने आपल्या अधिकारांचा इतका निरंकुश वरवंटा फिरवण्याची गरज होती का, असा प्रश्न.

त्याचे उत्तर होकारार्थी देऊ इच्छिणारे एका(च) मुद्द्याकडे लक्ष वेधतील. तो मुद्दा म्हणजे परवानगी नसतानाही 'सीजेपी'चा आंदोलन करण्याचा दुराग्रह. हा मुद्दा अत्यंत तर्कदुष्ट आणि मतलबी आहे. त्याचे प्रत्युत्तर 'सरकार शांततापूर्ण आंदोलनास परवानगी देतच नसेल तर काय?' या प्रतिप्रश्नाने देता येईल. या प्रकरणात सरकारने आंदोलकांस अशी परवानगी दिली असती तर काय घडले असते? आंदोलक जमले असते, घोषणाबाजी झाली असती, निदर्शने झाली असती इत्यादीपेक्षा अधिक काय? हा जमाव हिंसक झाला असता तर कायदा या सुव्यवस्थेचे कारण पुढे करत आंदोलकांस ताब्यात घेण्याचा अधिकार सरकारला होताच. पण आंदोलनास भविष्यात हिंसक वळण लागेल म्हणून वर्तमानात नागरिकांचा आंदोलनाचा अधिकारच काढून घेणे न्याय्य कसे? एखादी व्यक्ती आंदोलनासाठी घराबाहेर पडल्यावर कदाचित गैरकृत्य करू शकते; सबब तिला घरातून बाहेर पडूच देऊ नका अशी अरेरावी सरकार करू शकत नाही. तसा अधिकारच सरकारला नाही. तरीही तो आहे असे मानून सरकारने दडपशाही केली आणि अक्षरशः हजारो तरुणांना डांबून टाकले. याची अजिबात गरज नव्हती. त्यातही 'सीजेपी'चे अभिजित दीपके आणि अन्यांस ज्या पद्धतीने सरकारने 'उचलले' ते अत्यंत निषेधार्ह होते. हे तीन तरुण जाहीर पूर्वकल्पना देऊन दिल्लीकडे निघालेले होते. त्यांचे विमान दिल्लीत उतरल्यावर अगदी विमानात पोलीसफाटा घुसवून



सामर्थ्याचे महत्त्व संयमात असते. पण हा विवेक असल्याचा पुरावा विद्यमान सत्ताधाऱ्यांनी दर्शवला नसल्यानेच सर्वोच्च न्यायालयाकडून सरकारला चपराक मिळाली...

त्यांना ताब्यात घेण्याचा उद्योग सरकारी सामर्थ्याचे निर्लज्ज प्रदर्शन घडवणारा होता. विमान म्हणजे काही रेल्वे वा बस नव्हे की ज्यातून उतरल्यावर पळून जाण्याची संधी असते. आणि असे पळून जाण्याचा या तिघांचा इरादाही नव्हता. तरीही अन्य प्रवाशांच्या सोयी/ गैरसोयीचा कसलाही विचार न करता सरकारने या तिघांना विमानात घुसून ताब्यात घेतले. यात कसले शौर्य?

या असल्या वर्तनामुळे दहशत निर्माण होऊन संभाव्य निदर्शने टळतील असे सरकारला वाटत असेल तर तो निव्वळ भ्रम ठरेल. चांगल्या पालकत्वाच्या सूत्रात 'प्राप्ते तु षोडशे वर्षे; पुत्रे मित्रवदाचरेत' असा स्पष्ट सल्ला आपल्या संस्कृतीत आहे. मुलगा १६ वर्षांचा झाला की त्यास मित्रवत बरोबरीच्या नात्याने वागवावे असा त्याचा अर्थ. अशा तरुण पोरावर हात उचलण्याचा प्रमाद पालकांकडून घडला तर वडिलांच्या खांद्याला लागत असलेला हा मुलगा त्यांचा हात धरू शकतो किंवा कोडगेपणाचे दर्शन घडवत 'आणखी मारा' असेही म्हणू शकतो. असा संताप आलेला मुलगा प्रसंगी वडिलांची पत्रास न ठेवण्याचा धोका आपल्या संस्कृतीनेच दाखवून दिला असेल तर ही वयात आलेली पोरे सरकारची काय पत्रास ठेवणार? या सरकारातील संस्कृताभिमानीसें तरी ते ठाऊक हवे होते. अशा तरुणांवर आपला वडिलकीचा अधिकार गाजवायचा तर त्यासाठी केवळ 'वडील' असणे पुरेसे नसते. हे वडील असणे आपल्या वर्तनातून दाखवून द्यावे लागते. तसे नसेल तर पुढची पिढी कोणीतरी केवळ आधी जन्मला इतक्याच मुद्द्यावर अधिकार गाजवू पाहणाऱ्यास त्याची रास्त जागा दाखवून दिल्याखेरीज राहात नाही. सीजेपीचे आंदोलन हेच दाखवून देत आहे. आपल्या भवतालातील घटनांमुळे हे तरुण/तरुणी अस्वस्थ आहेत. अशावेळी त्यांच्या अस्वस्थतेस संयतपणे वाट काढून देणे, ही वाफ सुरक्षित मार्गाने बाहेर पडू देणे यातच शहाणपण असते. त्याचे अस्तित्व सरकारी कृतीतून तरी दिसत नाही. परिणामी मिळेल त्या मार्गाने या आंदोलनास आणि त्याहीपेक्षा आंदोलकांस चिरडण्याचा प्रयत्न सरकारने केला. तो दोन प्रकारे अंगाशी आला.

पहिल्यांदा सर्वोच्च न्यायालयाकडून चपराक सहन करावी लागली. रस्ते वाहतूक रोखणारे सर्व अडथळे दूर करा, रेल्वे/मेट्रो सेवा पूर्ववत करा, इंटरनेट सेवेत खंड पडता नये, उगाच कोणास बेकायदा ताब्यात घेऊ नका इत्यादी आदेश सर्वोच्च न्यायालयाने दिले. त्यातून न्यायपालिकेच्या जिवंतपणाचे दर्शन तर घडलेच; पण सरकारच्या अनिर्बंधतेवर अंकुश ठेवण्याची गरज सर्वोच्च न्यायालयासही वाटली हे दिसून आले. वकिलांपासून पत्रकारांपर्यंत मिळेल त्यावर सरकारने आपला अधिकार अकारण गाजवला. हे सर्व आंदोलक होते, असे सरकार म्हणू शकते. पण आंदोलक असणे हा काही गुन्हा आहे की काय? सनदशीर मार्गाने व्यक्त होण्याचा अधिकार आपली राज्यघटना देते. त्यास आडकाठी करून सरकारने स्वहस्ते अवलक्षण करून घेतले.

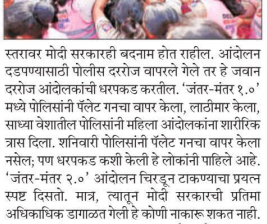
दुसरा मुद्दा या आंदोलनाच्या प्रसरणाचा. आपली अमानुष ताकद वापरून सरकार दिल्ली कडीकुलुपात बंद करू शकते. एका दिवसात सहा-सात हजारांस ताब्यात घेऊ शकते. पण किती दिवस? दिल्ली बंद होईलही. देशाचे काय? हे प्रश्न महत्त्वाचे अशासाठी की हे आंदोलन दाबण्याचा प्रयत्न जितक्या अधिक प्रमाणात दिल्लीत केला जाईल त्याच्या कित्येक पट अधिक हे आंदोलन दिल्लीबाहेर पसरेल. एखादे जंतर-मंतर प्रतिबंधित क्षेत्र करता येईल. पण तसे केल्यास गावा-गावांत आणि शहरा-शहरांत असेच जंतर-मंतर तयार होतील आणि भविष्याच्या प्रतीक्षेतील स्थानिक त्या त्या ठिकाणी आंदोलनांची राळ उडवून देतील. तेव्हा आपल्या वर्तनातून जंतर-मंतरचे हे अंतर सरकारने कमी करू नये हे शहाणपणाचे.

तोपर्यंत हे आंदोलन थांबणार नाही!

'नीट' प्रकरणामध्ये तत्कालीन केंद्रीय शिक्षणमंत्री धर्मेंद्र प्रधान यांच्या राजीनाम्यासाठी काँग्रेस जनता पार्टी (सीजेपी), डाव्या विद्यार्थी संघटना, दलित संघटना, कुठल्याच विचारांशी थेट बांधिलकी नसलेलेही तरुण-तरुणी आज जेन-झी आंदोलकांनी दिल्लीत जंतर-मंतरवर ठिय्या दिला होता. तीन महिन्यांपूर्वी जंतर-मंतर हे आंदोलनाचे एक ठिकाण झाले होते. तिथे दररोज तरुण आंदोलक गर्दी करत होते, कल्पकतेने केंद्र सरकारविरोधात घोषणाबाजी करत होते, समाजमाध्यमांवर रील्स बनवत होते, नवनव्या टॅगलाइन्स तयार करत होते आणि हे सगळे व्हायरल होत होते. 'जंतर-मंतर १.०' आंदोलन धर्मेंद्र प्रधान यांच्या राजीनाम्यामुळे यशस्वी झाले. आंदोलनाच्या शेवटच्या दिवशी जंतर-मंतर ओसंडून वाहात होते. केंद्र सरकारविरोधात इतकी प्रचंड गर्दी बारा वर्षांत पहिल्यांदाच दिल्लीतच काय अख्ख्या देशात पहिल्यांदा दिसली होती. मग, सगळे पांगले, आंदोलन-स्थळ ओस पडले. पण जंतर-मंतर हे केवळ आंदोलनस्थळ उरले नाही. ते मोदी सरकारविरोधातील आंदोलनाचे मोठे प्रतीक बनले. हे रूपांतर खरे तर तेव्हाच झालेले होते. त्याचे दृश्यस्वरूप शनिवारी दिल्लीत पाहायला मिळाले. दिल्लीभर जिकडे-तिकडे 'जंतर-मंतर' दिसू लागले.

जंतर-मंतर या आंदोलनस्थळाकडे जाणारे सर्व रस्ते शुक्रवारी संध्याकाळपासून रविवारपर्यंत बंद केलेले आहेत, तिथे भयाण शांतता आहे. या ठिकाणाच्या जवळपास जाता येते ते जनपथ लेनमधून. केरळ हाऊसच्या मागच्या गल्लीतून. याच गल्लीतून जंतर-मंतर १.० आंदोलनाच्या शेवटच्या दिवशी देशभरातून लोकांचा ओघ जाताना पाहिला होता. पण शनिवारी जंतर-मंतरच्या आसपासदेखील आंदोलकांना पोहोचता आले नाही. या स्थळापासून दोन-अडीच किमीच्या अंतरावरच आंदोलकांची पोलिसांनी धरपकड सुरू केली होती. 'ऑल इंडिया स्टुडण्ट्स असोसिएशन' (एआयएसए)च्या राष्ट्रीय अध्यक्ष नेहा बोरा आणि इतर डाव्या विद्यार्थी संघटनांचे कार्यकर्ते गेल्या आठवड्यात केरळ हाऊसपर्यंत म्हणजे जंतर-मंतर रोडवर तरी पोहोचले होते. यावेळी पोलिसांनी इतकी नाकाबंदी केली आहे की, तिथेपर्यंत कोणी पोहोचू शकले नाही. पोलिसांच्या म्हणा किंवा मोदी सरकारच्या या दमनशाहीतून जंतर-मंतर नावाचे प्रतीक लोकांच्या मनावर शनिवारी कोरले गेले असे म्हणता येईल. आता आंदोलकांना मोदी सरकारविरोधात आवाज उठवण्यासाठी जंतर-मंतर या आंदोलनस्थळाची गरज उरलेली नाही. ते दिल्लीत कुठेही आंदोलन करू शकतात. एकत्र येऊ शकतात. घोषणाबाजी करू शकतात. त्यामुळे जंतर-मंतरभोवती पोलीस आणि निमलष्करी दलांची 'छावणी' उभी करण्यातून काहीच साध्य होत नाही हे केंद्र सरकारला कळले असेल. 'जंतर-मंतर १.०'च्या आंदोलनाची केंद्रीय गृहमंत्रालयाला इतकी भीती बसली असावी की, आंदोलकांनी पुन्हा ठिय्या दिला तर आपलेच पद तर जाणार नाही ना, असा प्रश्न कार्हीच्या मनात घर करून राहिला असू शकतो. निदान गेल्या वेळी एकाच ठिकाणी आंदोलक गोळा होत होते. आता दिल्लीभर आंदोलक कधी केव्हा रस्त्यावर उतरतील हे सांगता येत नाही. ते जिथे येतील, तिथे पोलिसांना धावावे लागेल. मग शेजारच्या राज्यांतून पोलिसांचा फौजफाटा आणून जंतर-मंतरवर तैनात करण्यातून काय साध्य होणार हा प्रश्न गृहमंत्रालयाला विचारता येऊ शकतो.

केंद्रीय मुख्य निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांच्याविरोधात आपल्याला रस्त्यावर उतरायचे आहे, त्यासाठी जंतर-मंतरवर जाण्याची गरज नाही हे आंदोलकांना समजलेले आहे. जिथे अडवले जाईल, तिथे आपले जंतर-मंतर असे मानून आंदोलक दररोज होत राहिले तर मोदी सरकारच्या नाकीनऊ येईल हे निश्चित. या सरकारने शनिवारी सुमारे सात हजार आंदोलकांना ताब्यात घेतले. त्यांच्यासाठी लाखभर सुरक्षा जवान तैनात केले. मेट्रो बंद केली, रेल्वेगाड्या रद्द केल्या. ल्युटन्स दिल्लीत अक्षरशः 'टाळेबंदी' लागू केलेली होती. आंदोलकांना अशा अडथळ्यांनी काहीही फरक पडलेला नाही. आणखी किती दिवस मेट्रो, रेल्वे, ओला-ऊबर बंद ठेवणार, इंटरनेटची सेवा दिवस-दिवस बंद ठेवता येऊ शकेल का, याचा खरेतर गृहमंत्रालयाने विचार करण्याची गरज आहे. आता आंदोलक मागे हटणार नाहीत, ते ज्ञानेश कुमार यांचा राजीनामा घेतल्याशिवाय शांत बसणार नाहीत, ही लढाई दीर्घकाळ लढावी लागेल हेही त्यांना माहीत आहे. त्यासाठी त्यांनी मानसिक तयारी केलेली आहे. ते दररोज रस्त्यावर उतरतील. त्यांना दररोज ताब्यात घ्यावे लागेल. या तरुणांना आंदोलन केले म्हणून अटक करता येणार नाही. शिवाय, किती जणांना अटक करणार? दररोज सात हजार जणांना अटक करणे सरकारला परवडणारे आहे का? या अटकेचा देशभर काय परिणाम होईल. आणि अटक करणार तरी कशी? मग ताब्यात घेण्यातून तरी काय साध्य होईल, त्यातून दररोज पोलीस आणि निमलष्करी जवानांची बदनामी होत राहील. शनिवारी दिल्लीभर पोलिसांनी कशी दडपशाही केली याच्या चित्रफिती पुरेशा व्हायरल झालेल्या आहेत. त्याची दखल देशातच नव्हे परदेशातही घेतली गेलेली आहे. जितकी पोलिसांची बदनामी होईल, तितके आंतरराष्ट्रीय



स्तरावर मोदी सरकाराही बदनाम होत राहील. आंदोलन दडपण्यासाठी पोलीस दररोज वापरले गेले तर हे जवान दररोज आंदोलकांची धरपकड करतील. 'जंतर-मंतर १.०' मध्ये पोलिसांनी पैलेट गनचा वापर केला, लाठीमार केला, साध्या वेशातील पोलिसांनी महिला आंदोलकांना शारीरिक त्रास दिला. शनिवारी पोलिसांनी पैलेट गनचा वापर केला नसेल; पण धरपकड कशी केली हे लोकांनी पाहिले आहे. 'जंतर-मंतर २.०' आंदोलन चिरडून टाकण्याचा प्रयत्न स्पष्ट दिसतो. मात्र, त्यातून मोदी सरकारची प्रतिमा अधिकाधिक डागाळत गेली हे कोणी नाकारू शकत नाही. या दडपशाहीतून सरकार भयग्रस्त झाले आहे का, असा प्रश्न निर्माण होऊ लागला आहे.

कॅनॉट प्लेसवर शनिवारी काही हिंदुत्ववादी, भाजपसमर्थक टोळक्याने आंदोलकांना मारहाण करून हिंसा केली होती. अशी हिंसा करून केंद्र सरकार आंदोलकांना शांत करू शकेल असे दिसत नाही. मोदी सरकारबद्दलची लोकांच्या मनातील भीती संपलेली आहे, काही गुंड रस्त्यावर उतरवून लोकांना घाबरवता येईल अशी परिस्थिती राहिलेली नाही. शनिवारी आंदोलक आणि कथित गुंडांमधील संघर्षाची तीव्रता फार नव्हती. पण त्याची पुनरावृत्ती होत राहिली आणि त्यातून अनिष्ट गोष्टी घडल्या तर मोदी सरकार अधिक अडचणीत येईल. एका बाजूला सीजेपी, डाव्या व आंबेडकरी संघटना आंदोलनामध्ये उतरल्या आहेतच. काँग्रेसही जोमाने रस्त्यावर उतरलेला आहे. सोमवारी काँग्रेसचे नेते राहुल गांधींनी 'इंडिया' आघाडीच्या मोर्चाची घोषणा केली आहे. त्यासाठी देशभरातून काँग्रेसचे कार्यकर्ते दिल्लीत येतील. हरियाणा, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, मध्य प्रदेश या राज्यांतून तर ते येणारच. त्यातून हा संघर्ष अधिक तीव्र होत जाणार हे स्पष्टपणे दिसू लागले आहे. शिवाय, फक्त दिल्ली हे आंदोलनाचे केंद्र राहिलेले नाही. देशभरात ठिकठिकाणी आंदोलने होत आहेत. मुंबई-पुणे, लखनऊ, पाटणा, दक्षिणेत केरळ अशा वेगवेगळ्या शहरांत-निमशहरांत, राज्यांत हे आंदोलन उग्र होऊ लागलेले आहे.

जितकी आंदोलनाची व्याप्ती वाढेल, तितकी आपली लोकप्रियता घटेल हे सरकारला समजत असणारच. मग, मोदी सरकार ज्ञानेश कुमारांवर राजीनामा देण्यासाठी दबाव का आणत नाही, असे विचारले जात आहे. ज्ञानेश कुमार पायउतार होणे सरकारला आणि पर्यायाने भाजपला राजीनाम्याइतके सोपे जाणार नाही. एका बाजूला ज्ञानेश कुमार तर दुसरीकडे आंदोलन अशा कोंडीतून बाहेर पडण्याचा निर्धीक मार्ग सरकारला सापडलेला नाही. मोदी-शहा शांत आहेत, त्यांचे मंत्री मौन बाळगून आहेत. त्यांच्या सार्वजनिक कार्यक्रमांची संख्या घटली आहे. या कार्यक्रमांची फारशी नोंद होत नाही. त्यांना प्रतिसाद मिळत नाही. मोदी सरकार आणि भाजपला उत्तर प्रदेशमधील विधानसभा निवडणूक जिंकण्याची आशा आहे. पण त्यासाठी पाच महिन्यांचा कालावधी बाकी आहे. इथे तर पुढील पाच दिवस आंदोलकांना कसे सामोरे जायचे याची चिंता आहे. मग उत्तर प्रदेशची चर्चा आत्ता कशासाठी करायची? मोदी सरकारला आधी हे नवे 'जंतर-मंतर' आंदोलन आटोक्यात आणावे लागेल, त्यासाठी तडजोड करावी लागेल. आपल्याला शेतकऱ्यांसमोर झुकावे लागेल होते याची आठवण ठेवावी लागेल. तीच माफीची कृती पुन्हा करावी लागेल नाही तर आंदोलन थांबवण्याची शक्यता नाही!

लाल किल्ला

महेश सरलष्कर
mahesh.sarlashkar
@expressindia.com



केंद्रीय मुख्य निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांच्याविरोधात आपल्याला रस्त्यावर उतरायचे आहे, त्यासाठी जंतर-मंतरवर जाण्याची गरज नाही हे आंदोलकांना समजलेले आहे. मोदी सरकारला हे आंदोलन आटोक्यात आणतेवेळी, 'आपल्याला शेतकऱ्यांसमोर झुकावे लागले होते' याची आठवण ठेवावी लागेल....

अन्वयार्थ

भाजपला दिलासा!

मुख्य निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांच्या राजीनाम्यासाठी नवी दिल्लीत काँग्रेस, डावे पक्ष, आम आदमी पार्टीसह विरोधकांचे सुरू असलेले आंदोलन, काँक्रीट जनता पार्टीच्या आंदोलनाच्या निमित्ताने राजधानी दिल्लीची करण्यात आलेली तटबंदी या पार्श्वभूमीवर चार राज्यांमधील सहा जागांसाठी झालेल्या पोटनिवडणुकांच्या निकालाने केंद्रातील भाजपला दिलासाच मिळाला. पश्चिम बंगाल, तमिळनाडू, आसाम आणि पुडुचेरी या राज्यांपेक्षा सत्ताधारी पक्षांनी पोटनिवडणुकांत यश मिळविले आहे. तसेही पोटनिवडणुकांमध्ये सत्ताधारी पक्षाला कौल मिळण्याची परंपराच आहे. मात्र या सहापैकी भाजपच्या ताब्यात एकच जागा होती. पोटनिवडणुकांमध्ये भाजपला तीन मतदारसंघांमध्ये विजय मिळाला. पश्चिम बंगाल आणि आसाममधील विजय भाजपसाठी अधिक महत्त्वाचा.

पोटनिवडणुकांच्या निकालांवरून बदलत्या राजकीय समीकरणाचा अर्थ लावणे चुकीचे ठरेल; पण पश्चिम बंगाल आणि आसाममध्ये मुस्लीमबहुल दोन मतदारसंघांमध्ये भाजपला मिळालेला मोठा विजय हा मुस्लीम मतदारांची मानसिकता बदलल्याचे लक्षण मानावे का, अशी चर्चा सुरू झाली. पश्चिम बंगालमधील दोन्ही मतदारसंघांतील विजयाबद्दल मुख्यमंत्री सुवेंदुअधिकारी यांनी अल्पसंख्याक मतदारांचे आभार मानले हे विशेष! पश्चिम बंगालमधील रेजीनगर विधानसभा मतदारसंघात ७० टक्के मतदार हे मुस्लीम समाजाचे. पाच महिन्यांपूर्वी झालेल्या विधानसभा निवडणुकीत स्थानिक मुस्लीम संघटनेचे नेते हुमायून कबीर हे ५९ हजार मतांनी विजयी झाले होते. पोटनिवडणुकीत कबीर यांच्या मुलाचा ७५ हजार मतांनी पराभव झाला. भाजप उमेदवाराला मिळालेल्या १ लाख ३० हजार मतांवरून मुस्लीम मतदारांचा पाठिंबा भाजपला मिळाल्याचे स्पष्टच होते. आसाममधील नागाव लोकसभा मतदारसंघ हा मुस्लीमबहुल मतदारसंघ मानला जातो. २०२४च्या सार्वत्रिक निवडणुकीत या मतदारसंघात काँग्रेसचा उमेदवार २ लाखांहून अधिक मतांनी विजयी झाला होता. यंदा भाजपचा उमेदवार १ लाख ४२ हजार मतांनी विजयी झाला. काँग्रेस उमेदवार तिसऱ्या क्रमांकावर तर अत्तर-सम्राट मोहमद बद्रुद्दिन अजमल हे दुसऱ्या क्रमांकावर आले. आसाममध्ये मुस्लीम मतदार हे पारंपारिक काँग्रेसला पाठिंबा द्यायचे. नंतर अजमल यांनी स्थापन केलेल्या 'एआययूडीएफ' पक्षाकडे मुस्लीम मतदारांचा ओढा होता. लोकसभा निवडणुकीत मुस्लीम मतदारांनी पुन्हा काँग्रेसला पाठिंबा दिला. पण नागावच्या निकालामुळे मुस्लीम मतदारांमधील एक वर्ग भाजपकडे वळू लागल्याचा निष्कर्ष काढला जाऊ लागला. अर्थात, भाजपने सत्तेचा गैरवापर केल्याचा आरोप पश्चिम बंगाल आणि आसाममधील विरोधकांनी केला आहे, असे असले तरी काही प्रमाणात मुस्लीम मते ही भाजपकडे वळल्याचे आकडेवारी दर्शवते.

तमिळनाडुतील दोन्ही मतदारसंघांत टीव्हीकेच्या विजयाने मुख्यमंत्री जोसेफ विजय यांनी आपले स्थान अधिक भक्कम केले. या दोन्ही मतदारसंघात विजयी झालेल्या अण्णा द्रमुकच्या आमदारांनी राजीनामे देत टीव्हीकेमध्ये प्रवेश केला होता. मे महिन्यात झालेल्या विधानसभा निवडणुकीत दोन्ही मतदारसंघात विजय मिळवणाऱ्या टीव्हीकेने गेल्या वेळी जिंकलेल्या अण्णा द्रमुकचे उमेदवार तिसऱ्या क्रमांकावर मागे पडले. मुख्य लढत ही टीव्हीके आणि द्रमुकमध्ये झाली. जयललिता यांच्या पश्चात अण्णा द्रमुकची झालेली पिछेहाट थांबण्याचे नाव नाही. अशीच परिस्थिती राहिल्यास अण्णा द्रमुक पक्ष भविष्यात राजकीय सरीपाटावरून नाहीसा होण्याची भीती वर्तविली जाते. गेली सहा दशके द्रमुक आणि अण्णा द्रमुक अशा दोन प्रादेशिक पक्षांभोवताली फिरणाऱ्या तमिळनाडूच्या राजकारणात मुख्यमंत्री विजय यांचा टीव्हीके हा तिसरा प्रमुख पक्ष म्हणून पुढे आला आहे. द्विपक्षीय राजकारणाची सद्दी संपली. तमिळनाडूचा निकाल हा अण्णा द्रमुकसाठी धोक्याची घंटा मानली जाते.

मुख्य निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांच्या विरोधात देशभर वातावरण तापले आहे. मतचोरीचा मुद्दा गाजतो आहे. अशा वातावरणातही पोटनिवडणुकांमध्ये भाजपला मिळालेले यश खरोखरीच महत्त्वाचे आहे. याशिवाय राजस्थान आणि त्रिपुरामधील स्थानिक स्वराज्य संस्थांच्या निवडणुकांमध्ये भाजपला चांगले यश मिळाले. शेवटी मतदानातून मिळणारा कौलच निर्णायक असतो. देशातील अस्थिर वातावरणात मिळालेले यश हे भाजपसाठी नक्कीच आशादायी ठरणार आहे.

'महाराष्ट्र ग्रामदान अधिनियम' रद्द केल्याने काय साध्य होणार?

विश्लेषण

मोहन अटाळकर
mohan.atalkar@expressindia.com

राज्य सरकारने 'महाराष्ट्र ग्रामदान अधिनियम १९६४' रद्द करण्यासाठी प्रारूप अधिनियमचा मसुदा प्रसिद्ध केला. पण हा अधिनियम रद्द करण्यास कुणाचा विरोध आहे आणि कशासाठी?

ग्रामदान म्हणजे नेमके काय?

ग्रामदान हा गांधीवादी विचारवंत विनोबा भावे यांनी १९५१ मध्ये सुरू केलेल्या 'भूदान चळवळी'चाच पुढचा टप्पा आहे. भूदानाचा अर्थ मोठ्या जमीनदारांकडून मिळालेल्या जमिनीचे भूमिहीनांमध्ये पुनर्वितरण करणे असा होता; तर ग्रामदान अंतर्गत संपूर्ण गाव आपली जमीन एका विश्वस्त संस्थेच्या स्वाधीन करते. या पद्धतीमुळे गावाबाहेरील कोणालाही किंवा गावातील ज्याने ग्रामदानात सहभाग घेतला नाही, अशा व्यक्तीला जमीन विकता येत नाही. मात्र, मूळ मालक आपापल्या जमिनीवर शेती करणे सुरू ठेवू शकतात आणि त्याचे लाभ मिळवू शकतात. यामुळे नैसर्गिक संसाधनांवर समाजातील प्रत्येकाला समान हक्क आणि जबाबदाऱ्या मिळून त्यांचे रक्षण करण्याचा मार्ग मोकळा झाला. महाराष्ट्रात ग्रामदान कायदा दहा जिल्ह्यांमधल्या २१ गावांनी स्वीकारला.

अधिनियम सरसकट रद्द करण्यास विरोध का?

महाराष्ट्र ग्रामदान अधिनियम १९६४ सरसकट रद्द करण्यास भूदान ग्रामदान किसान असोसिएशनसह भूदान चळवळीतील कार्यकर्त्यांनी विरोध दर्शवला आहे. प्रारूप अधिनियमावर हरकती नोंदवून मुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस यांच्याकडे मागण्याही मांडल्या आहेत. प्रथम कायद्यात आवश्यक सुधारणा करण्याचा पर्याय स्वीकारणार यावा, अशी भूदान चळवळीतील कार्यकर्त्यांची मागणी आहे. ग्रामदान अधिनियम हा केवळ जमीन व्यवहाराचा कायदा नाही. त्याकडे केवळ जमीन खरेदी-विक्री, हस्तांतर किंवा महसूल अभिलेखांशी संबंधित कायदा म्हणून पाहणे योग्य होणार नाही. हा अधिनियम विनोबा भावे यांच्या भूदान-ग्रामदान विचारांना कायदेशीर चौकट देणाऱ्या ऐतिहासिक प्रक्रियेचा भाग आहे. त्यामुळे या अधिनियमाचे मूल्यमापन केवळ जमीन व्यवहारातील अडचणींच्या आधारे करून ती सरसकट रद्द करणे योग्य होणार नाही, असे या कार्यकर्त्यांचे म्हणणे आहे.

अंमलबजावणी अपुरी का राहिली?

ग्रामदान अधिनियमातील काही तरतुदी आजच्या काळात अडचणी निर्माण करीत असतील, तर त्या तरतुदींमध्ये आवश्यक सुधारणा करणे शक्य आहे. पण, गेल्या सहा दशकांत अधिनियमातील किती तरतुदी प्रभावीपणे लागू करण्यात आल्या? किती ग्रामदान गावांना अधिनियमाने अपेक्षित अधिकार प्रत्यक्षात देण्यात आले? अंमलबजावणीत विलंब होण्याची कारणे कोणती? ग्रामदान गावांच्या अडचणी कायद्यामुळे निर्माण झाल्या की प्रशासकीय अंमलबजावणीच्या अभावामुळे? असे प्रश्न भूदान चळवळीतील कार्यकर्त्यांनी उपस्थित केले आहेत.

मेंढा-लेखा प्रकरणात काय झाले?

गडचिरोली जिल्ह्यातील मेंढा-लेखा हे ग्रामदान व्यवस्थेच्या संदर्भातील अत्यंत महत्त्वाचे उदाहरण आहे. गावाने आवश्यक कायदेशीर प्रक्रिया पूर्ण करून ग्रामदान स्वीकारले. मात्र यानंतर ग्रामदान अधिनियमाच्या कलम ३९ अंतर्गत ग्राम मंडळाला ग्रामपंचायतीचे अधिकार व कर्तव्ये देण्याची कार्यवाही शासनाकडून दीर्घकाळ प्रलंबित राहिली. परिणामी ग्राम मंडळास न्यायालयीन मार्गाचा अवलंब करावा लागला. मुंबई उच्च न्यायालयाच्या नागपूर खंडपीठाने या प्रकरणात शासनाच्या वैधानिक कर्तव्याकडे लक्ष वेधून आवश्यक कार्यवाही करण्याचे निर्देश दिले. त्यानंतर शासनाने दिनांक २१ फेब्रुवारी २०२४ रोजी संबंधित अधिसूचना काढून आवश्यक प्रशासकीय कार्यवाही केली. कोणत्याही कायद्याची अंमलबजावणी करणे ही शासनाची जबाबदारी; पण ग्रामदान कायद्याची अंमलबजावणी वेळेवर न झाल्याने निर्माण झालेल्या समस्येच्या आधारावर आता तोच कायदा रद्द करणे न्याय्य ठरेल काय? हा सवाल उपस्थित करण्यात आला आहे.

प्रमुख मागण्या काय आहेत?

अधिनियम रद्द करण्याची प्रक्रिया स्थगित करावी, सर्व ग्रामदान गावांची यादी प्रसिद्ध करावी, जमीन आणि प्रशासकीय स्थिती सार्वजनिक करावी, प्रभावित गावांमध्ये सार्वजनिक सुनावणी घ्यावी, ग्रामसभा आणि ग्राम मंडळांचे लेखी मत घ्यावे, मेंढा-लेखा प्रकरणातील उच्च न्यायालयाच्या निर्णयाचा सखोल अभ्यास करावा, अधिनियमाच्या मागील सहा दशकांच्या अंमलबजावणीची श्वेतपत्रिका प्रसिद्ध करावी, अधिनियमातील प्रत्यक्ष अडचणींचा अभ्यास करून आवश्यक त्या तरतुदींमध्ये सुधारणा करावी, ग्रामदान जमिनीच्या मालकी, वापर, वारसा, हस्तांतरण आणि कर्जपुरवठ्याबाबत स्पष्ट कायदेशीर व्यवस्था करावी, ग्राम मंडळ आणि ग्रामपंचायत यांचे अधिकार व कर्तव्ये स्पष्ट करावीत, या प्रमुख मागण्या आहेत.

सुधारित ग्रामदान कायद्याचा पर्याय आहे?

ग्रामदान अधिनियम रद्द करण्याऐवजी त्याचे आधुनिकीकरण करून सुधारित ग्रामदान कायद्याचा पर्याय निवडावा. या अधिनियमाकडे केवळ जुना किंवा कालबाह्य जमीन कायदा म्हणून पाहणे योग्य होणार नाही, असे भूदान चळवळीतील कार्यकर्त्यांचे म्हणणे आहे. विनोबा भावे यांच्या विचारविश्वातून आणि आपसामान्य प्रतिभेतून साकार झालेले भूदान आणि ग्रामदान धोक्यात आले आहे, अशी खंत भूदान चळवळीतील ज्येष्ठ कार्यकर्ते नरेंद्र वैस यांनी व्यक्त केली आहे.

चिंतन

नेताओं की महत्वाकांक्षा में पिस रहा आम आदमी

राजधानी दिल्ली में पिछले एक सप्ताह से राजनीतिक दलों की खींचतान का खामियाजा आम आदमी भुगत रहा है। पहले कांग्रेस और इंडिया ब्लॉक के प्रदर्शन, फिर कॉंवरिया जनता पार्टी (सीजेपी) और वामपंथी संगठनों के विरोध ने दिल्ली की रफ्तार पर ब्रेक लगा दिया। मेट्रो स्टेशन बंद हुए, रेल यात्रियों की मुश्किलें बढ़ीं और इंटरनेट सेवाओं पर भी असर पड़ा। नौकरीपेशा लोग समय पर दफ्तर नहीं पहुंच पाए, विद्यार्थियों की पढ़ाई प्रभावित हुई और रोज कमाकर खाने वालों के सामने रोजी-रोटी का संकट खड़ा हुआ। नेताओं की महत्वाकांक्षाओं और राजनीतिक वर्चस्व की लड़ाई में आम आदमी एक बार फिर पिसने को मजबूर है। सवाल सीधा है कि अपनी ताकत दिखाने की इस राजनीति में जनता को सजा क्यों मिले? लोकतंत्र में विरोध का अधिकार है, लेकिन जनता को परेशान करने का लाइसेंस नहीं। निर्वाचन आयोग के फैसलों पर सवाल उठाना हो, मुख्य चुनाव आयुक्त के इस्तीफे की मांग करनी हो या सरकार की नीतियों का विरोध करना हो, राजनीतिक दलों को अपनी बात रखने की पूरी स्वतंत्रता है। मगर विरोध का ऐसा तरीका, जो लाखों लोगों की दिनचर्या बिगाड़ दे, इसे किसी सूरत में सही नहीं ठहराया जा सकता। नेता धरने पर बैठकर अपनी मांगों के लिए लड़ते हैं, लेकिन इसकी कीमत उस कर्मचारी को चुकानी पड़ती है, जिसकी एक दिन की अनुपस्थिति वेतन कटवा सकती है। परीक्षा देने जा रहे विद्यार्थी, अस्पताल पहुंचने की कोशिश करता मरीज और रोज की कमाई पर निर्भर मजदूर किसी राजनीतिक दल के विरोधी नहीं हैं। फिर उन्हें इस लड़ाई में घसीटने का हक किसने दिया? 10 अक्टूबर को सीजेपी और वामपंथी संगठनों के प्रदर्शन के दौरान हालात की गंभीरता सामने आई। खबरों के अनुसार, सुरक्षा व्यवस्था के मद्देनजर दिल्ली में 45 मेट्रो स्टेशन बंद किए गए और सात हजार से अधिक प्रदर्शनकारियों को हिरासत में लिया गया। रविवार को सुप्रीम कोर्ट की विशेष पीठ ने मेट्रो सेवाएं सामान्य रखने, इंटरनेट बाधित नहीं करने और लोगों की आवाजाही नहीं रोकने पर जोर दिया। संबंधित अधिकारियों से जवाब भी मांगा गया। हालांकि कानून व्यवस्था बनाए रखना प्रशासन की जिम्मेदारी है, लेकिन प्रतिबंध समस्या के अनुपात में ही होने चाहिए। कुछ स्थानों पर तनाव की आशंका के कारण पूरे शहर की रफ्तार रोक देना उचित नहीं। सुरक्षा व्यवस्था ऐसी होनी चाहिए कि प्रदर्शन भी हो और आम नागरिक का जीवन भी चलता रहे। विडंबना यह है कि हर राजनीतिक दल जनता के नाम पर राजनीति करता है, लेकिन विरोध के दौरान सबसे पहले उसी जनता की सुविधा को ताक पर रख देता है। इस बार तो एक गैर जिम्मेदार दल और कुछ कथित नेता अपनी महत्वाकांक्षा के चलते लोगों को बरगलाकर प्रदर्शन में धकेल रहे हैं। राजनीतिक दलों को प्रदर्शन के लिए ऐसे स्थान और तरीके चुनने चाहिए, जिनसे सार्वजनिक परिवहन, अस्पतालों, स्कूलों और कामकाजी लोगों की आवाजाही प्रभावित न हो। प्रशासन को भी वैकल्पिक मार्गों और परिवहन की व्यवस्था करनी चाहिए तथा प्रतिबंधों को अंतिम विकल्प के रूप में अपनाना चाहिए। राजनीति जनसेवा का माध्यम है, जनजीवन को बंधक बनाने का नहीं। नेताओं को समझना होगा कि जनता केवल रैलियों में भीड़ जुटाने या चुनाव में वोट देने के लिए नहीं है। उसकी रोजमर्रा की जरूरतें और अधिकार भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं, जितने राजनीतिक दलों के मुद्दे। लोकतंत्र की सार्थकता शक्ति प्रदर्शन में नहीं, बल्कि नागरिकों के अधिकारों की रक्षा में है।



मुद्दा
महेन्द्र तिवारी

अब तक देश में इंटरनेट की पहुंच बढ़ाने का प्रमुख आधार मोबाइल टावर, भूमिगत प्रकाशीय तंतु और दूरसंचार नेटवर्क रहे हैं। उपग्रहों के माध्यम से इंटरनेट उपलब्ध कराने वाली तकनीक ने संभावनाओं के नए द्वार खोल दिए हैं। इस परिवर्तन के केंद्र में एलन मस्क की कंपनी स्पेसएक्स की स्टारलिंक सेवा और मुकेश अंबानी की रिलायंस जियो जैसी कंपनियां हैं। इन दोनों के बीच उभरती प्रतिस्पर्धा केवल दो उद्योगपतियों की कारोबारी लड़ाई नहीं है, बल्कि यह भारत में भविष्य की संचार व्यवस्था, बाजार के नियमों और डिजिटल आत्मनिर्भरता से जुड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न भी है। एलन मस्क की स्टारलिंक निम्न पृथ्वी कक्षा में स्थापित उपग्रहों के माध्यम से इंटरनेट उपलब्ध कराती है।

सस्ता डेटा बेहतर या तेज उपग्रह नेटवर्क

भारत में इंटरनेट की दुनिया एक नए दौर में प्रवेश कर रही है। अब तक देश में इंटरनेट की पहुंच बढ़ाने का प्रमुख आधार मोबाइल टावर, भूमिगत प्रकाशीय तंतु और दूरसंचार नेटवर्क रहे हैं। उपग्रहों के माध्यम से इंटरनेट उपलब्ध कराने वाली तकनीक ने संभावनाओं के नए द्वार खोल दिए हैं। इस परिवर्तन के केंद्र में एलन मस्क की कंपनी स्पेसएक्स की स्टारलिंक सेवा और मुकेश अंबानी की रिलायंस जियो जैसी कंपनियां हैं। इन दोनों के बीच उभरती प्रतिस्पर्धा केवल दो उद्योगपतियों की कारोबारी लड़ाई नहीं है, बल्कि यह भारत में भविष्य की संचार व्यवस्था, बाजार के नियमों और डिजिटल आत्मनिर्भरता से जुड़ा महत्वपूर्ण प्रश्न भी है। एलन मस्क की स्टारलिंक निम्न पृथ्वी कक्षा में स्थापित उपग्रहों के माध्यम से इंटरनेट उपलब्ध कराती है। इसकी विशेषता यह है कि इसके लिए प्रत्येक स्थान तक भूमिगत तार बिछाना या मोबाइल टावर स्थापित करना आवश्यक नहीं होता। उपयोगकर्ता के स्थान पर उपयुक्त उपकरण लगाकर उपग्रहों के माध्यम से इंटरनेट से जुड़ा जा सकता है।

यह व्यवस्था विशेष रूप से उन क्षेत्रों में उपयोगी हो सकती है, जहां पहाड़, घने जंगल, दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियां अथवा बिखरी हुई आबादी के कारण पारंपरिक संचार नेटवर्क पहुंचाना कठिन और खर्चीला होता है। भारत जैसे विशाल देश में इस तकनीक की उपयोगिता को नकारा नहीं जा सकता। हिमालयी क्षेत्रों के गांवों, सीमावर्ती बस्तियों, द्वीपों और दूरस्थ वनवासी क्षेत्रों में इंटरनेट की बेहतर उपलब्धता शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यापार तथा प्रशासनिक सेवाओं को मजबूत कर सकती है। प्राकृतिक आपदाओं के समय भी उपग्रह आधारित संचार महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। बाढ़, भूकंप अथवा चक्रवात के कारण जब सड़कें क्षतिग्रस्त हो जाएँ और जमीन पर आधारित संचार व्यवस्था बाधित हो जाए, तब उपग्रह संपर्क राहत और बचाव कार्यों में सहायक बन सकता है। हालांकि, इसके लिए बिजली, उपयुक्त उपकरण और आवश्यक तकनीकी व्यवस्था भी उपलब्ध होनी चाहिए। स्टारलिंक की भारत में संभावित शुरुआत को लेकर चर्चा उस समय अधिक तेज हो गई, जब कंपनी को आवश्यक प्रारंभिक नियामकीय अनुमतियां मिलने के बाद भी व्यावसायिक सेवा शुरू करने की प्रक्रिया पूरी नहीं हो सकी। भारत में किसी विदेशी उपग्रह संचार कंपनी के लिए केवल अनुमति प्राप्त कर लेना पर्याप्त नहीं है। उसे सुरक्षा संबंधी शर्तों, तकनीकी मानकों, नियामकीय नियमों और अन्य निर्धारित आवश्यकताओं को पूरा करना पड़ता है। उपग्रहों के माध्यम से उपलब्ध कराई जाने वाली सेवाओं में राष्ट्रीय सुरक्षा और संचार व्यवस्था की निगरानी विशेष रूप से महत्वपूर्ण होती है। इसी पृष्ठभूमि में एलन मस्क और मुकेश अंबानी के बीच विवाद चर्चा का विषय बना। अक्टूबर 2026 में मस्क ने सामाजिक संचार मंच एक्स पर अंबानी के प्रभाव को लेकर व्यंग्यात्मक टिप्पणियां कीं। उन्होंने आरोप लगाया कि भारत में कुछ प्रभावशाली कारोबारी उपग्रह इंटरनेट के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा को सीमित करना चाहते हैं। उन्होंने अंबानी को निशाना बनाते हुए यह भी पूछा कि क्या वही भारत के वास्तविक निर्णायक हैं। मस्क की टिप्पणियों में यह शिकायत दिखाई देती है कि उनकी कंपनी को भारती बाजार में अपनी सेवाएं



शुरू करने के लिए अपेक्षित गति से आगे बढ़ने का अवसर नहीं मिल रहा है। हालांकि, किसी कंपनी को अनुमति मिलने में देरी को सीधे तौर पर दूसरी कंपनी के दबाव या एकाधिकार की कोशिश का प्रमाण नहीं माना जा सकता। इसके लिए ठोस तथ्य आवश्यक हैं।

भारत सरकार का पक्ष है कि उपग्रह संचार सेवा उपलब्ध कराने वाली कंपनियों को निर्धारित नियमों और सुरक्षा संबंधी शर्तों का पालन करना होगा। सरकार ने यह भी स्पष्ट किया है कि वह किसी एक कंपनी को विशेष लाभ देने के पक्ष में नहीं है। स्टारलिंक, जियो की उपग्रह संचार सेवा और वनवेब जैसी कंपनियों को संबंधित नियामकीय आवश्यकताएं पूरी करनी होंगी। इस दृष्टि से विवाद को समझने के लिए आरोपों और प्रमाणित तथ्यों के बीच अंतर बनाए रखना जरूरी है। इस बहस में जोहो के संस्थापक श्रीधर वेम्बु की टिप्पणियां भी उल्लेखनीय हैं। उन्होंने भारत में सस्ते इंटरनेट की उपलब्धता और दूरसंचार क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा के महत्व को रेखांकित किया। उनके अनुसार, भारत में मोबाइल इंटरनेट की कम कीमतों ने आम नागरिकों के जीवन में व्यापक परिवर्तन किया है। कुछ वर्ष पहले तक इंटरनेट का नियमित उपयोग अनेक परिवारों के लिए महंगा था। आज विद्यार्थी ऑनलाइन अध्ययन कर सकते हैं, छोटे व्यापारी अपने ग्राहकों तक पहुंच सकते हैं और ग्रामीण क्षेत्रों के लोग अनेक सरकारी तथा वित्तीय सेवाओं का लाभ उठा सकते हैं। भारतीय दूरसंचार क्षेत्र में रिलायंस जियो के प्रवेश ने इस परिवर्तन को गति देने में अहम भूमिका निभाई। कम कीमत पर अधिक आंकड़ा उपलब्ध कराने वाली योजनाओं ने दूसरी कंपनियों को भी अपनी सेवाओं और मूल्य निर्धारण की रणनीतियों पर पुनर्विचार करने के लिए प्रेरित किया। इससे इंटरनेट उपयोगकर्ताओं की संख्या बढ़ी और डिजिटल सेवाओं का विस्तार हुआ। फिर भी भारत में सस्ते इंटरनेट की उपलब्धता का पूरा श्रेय किसी एक कंपनी को देना उचित नहीं होगा।

सरकारी डिजिटल पहलों, दूरसंचार क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा, तकनीकी प्रगति और स्मार्ट उपकरणों की बढ़ती उपलब्धता ने भी इसमें योगदान दिया है। अब प्रश्न यह है कि स्टारलिंक जैसी सेवा भारतीय बाजार में किस प्रकार अपनी जगह बनाएगी। उपग्रह इंटरनेट की सबसे बड़ी विशेषता इसकी भौगोलिक पहुंच है, लेकिन इसकी लागत एक बड़ी चुनौती है। पारंपरिक मोबाइल इंटरनेट का उपयोग करने के लिए सामान्यतः अलग से उपग्रह उपकरण लगाने की जरूरत नहीं पड़ती। इसलिए भारत के विशाल उपभोक्ता वर्ग के लिए केवल तकनीकी श्रेष्ठता पर्याप्त नहीं होगी। सेवा की कीमत, विश्वसनीयता और वास्तविक उपयोगिता भी निर्णायक होंगी।

इस प्रकार दोनों व्यवस्थाओं को एक-दूसरे का पूर्ण विकल्प मानने के बजाय पूरक के रूप में देखना अधिक व्यावहारिक होगा। मोबाइल नेटवर्क और भूमिगत संचार तंत्र बड़ी आबादी को कम लागत पर जोड़ सकते हैं, जबकि उपग्रह इंटरनेट उन स्थानों तक पहुंच बढ़ा सकता है, जहां अन्य माध्यम सीमित हैं। इस विवाद का सबसे जटिल पक्ष रेडियो तरंगों के उपयोग के लिए आवश्यक स्पेक्ट्रम का आवंटन है। भारत की डिजिटल यात्रा अब केवल इंटरनेट की गति बढ़ाने तक सीमित नहीं है। यह इस बात से भी जुड़ी है कि देश अपनी तकनीकी आवश्यकताओं, आर्थिक हितों और राष्ट्रीय सुरक्षा के बीच कैसा संतुलन स्थापित करता है। स्टारलिंक और जियो के बीच उभरती प्रतिस्पर्धा इस संतुलन की परीक्षा है। सरकार को पारदर्शी नियमों, निष्पक्ष निर्णयों और दीर्घकालिक दृष्टि के साथ आगे बढ़ना होगा। अंततः सफलता किसी उद्योगपति की व्यक्तिगत जीत में नहीं, बल्कि उस व्यवस्था के निर्माण में होगी जो भारत के प्रत्येक नागरिक को डिजिटल अवसरों से जोड़ सके।

(लेखक स्वतंत्र स्तंभकार हैं। ये उनके अपने विचार हैं।)

लेख पर अपनी प्रतिक्रिया **haribhoomi@gmail.com** पर दे सकते हैं।

पुण्यतिथि विशेष
कृष्ण प्रताप सिंह



डॉ. लोहिया ने छेड़ी 'तीन आना बनाम पंद्रह आना' की बहस

सन् 1967 में 12 अक्टूबर को (यानी आज के ही दिन) पौरुष ग्रंथि के विफल ऑपरेशन से पीड़ित समाजवादी चिंतक डॉ. राममनोहर लोहिया का निधन हुआ तो राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने अपने एक भावप्रवण संस्मरण में लिखा था : कोई महीना भर पहले मैंने उन्हें सुझाया कि वे हमेशा 'सप्तक्रांति के स्फुलिंग' ही न बने रहा करें। अपना 'शाश्वत' क्रोध घटायें और अपने समकालीन नेताओं से छोटी-छोटी बातों को लेकर कटुताएं न पैदा किया करें। अन्यथा कहीं ऐसा न हो कि उनके प्रधानमंत्री बनने का अवसर आये तो ये कटुताएं उनके रास्ते की बाधा बन जायें। इस पर उनका उत्तर था, 'दिनकर, तुम समझते हो कि बहुत दिन जीने वाला हूं मैं? मेरी आयु बहुत कम है, इसलिए जब भी जो भी बोलता हूं, उसे बोल लेने दो मुझे।' अब मुझे लगता है कि उन्होंने अपनी मौत को पहले ही देख लिया था। आज की तारीख में कम ही लोग जानते होंगे कि डॉ. लोहिया और 'दिनकर' परस्पर अभिन्न मित्र थे। इस तथ्य के बावजूद कि राजनीति में उनकी सक्रियताएं परस्पर विरोधी थीं। निधन के वक्त लोहिया महज 57 साल के थे और उनका संसदीय जीवन भी लम्बा नहीं रहा था। इसका एक बड़ा कारण उनका चुनावी जीत-हार को बहुत महत्व न देना, 1962 से पहले कोई लोकसभा चुनाव न लड़ना और 1962 में भी फूलपुर जाकर लगभग असम्भव मुकाबले में सीधे तत्कालीन प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू से भिड़ जाना था। उनके अनुसार लोकतंत्र में चुनाव अपनी पार्टी की नीतियों को मतदाताओं तक ले जाने के अवसर होते हैं और आते-जाते रहते हैं। इसलिए मतदाताओं द्वारा उनमें सुनाये गये फैसलों को लेकर हाय-तौबा का कोई हासिल नहीं होता। ऐसे किसी हासिल के लिए तो शिकस्त के दिन से ही अगले मुकाबले की तैयारी में लग जाना होता है। उन्होंने लगभग यही बात 1962 के लोकसभा चुनाव में अपनी पार्टी की करारी हार के बाद नैनीताल में उसके कार्यकर्ताओं को निराशा के कर्तव्य समझाते हुए भी कही थी। बाद में इन्हीं कार्यकर्ताओं (जो कह रहे थे कि



तत्कालीन परिस्थितियों में लोहिया का लोकसभा में होना बहुत जरूरी है) की मांग पर वे उत्तर प्रदेश की फर्रुखाबाद लोकसभा सीट का उपचुनाव (जो वहां से निर्वाचित कांग्रेस सांसद मूलचंद दूबे के निधन के कारण हुआ था) लड़े और जीते थे। नये परिसीमन के फलस्वरूप अलग कन्नौज लोकसभा सीट अस्तित्व में आई तो 1967 के लोकसभा चुनाव में वे उस सीट से भी चुनाव लड़े और विजयी हुए थे। थोड़े ही दिनों बाद वे इस दुनिया को अलविदा कह गए। इस तरह वे दो कार्यकालों में कुल मिलाकर मुश्किल से एक कार्यकाल की अवधि के बराबर ही लोकसभा में रहे, लेकिन उसकी कार्यवाहियों और बहसों में अपनी अनूठी हिस्सेदारी से यह सिद्ध कर गये कि छोटी होने के बावजूद उसमें उनकी उपस्थिति महनीय है। लोकसभा में दिये गये उनके अन्य सारे भाषण भुला दिये जायें तो अकेला 'तीन आने बनाम पन्द्रह आने' वाला ऐतिहासिक भाषण ही उन्हें अप्रासंगिक नहीं होने देगा और उनकी याद दिलाता रहेगा। उन्होंने यह भाषण आचार्य जेबी कृपलानी द्वारा 22 अगस्त, 1963 को जवाहरलाल नेहरू की सरकार के खिलाफ लाये गये अविश्वास प्रस्ताव के समर्थन में दिया था। यह प्रस्ताव आजादी के बाद किसी भी सरकार के खिलाफ पहला अविश्वास प्रस्ताव था, जिसकी हिमायत में लोहिया ने कहा था कि 27 करोड़ (उस वक्त की देश की जनसंख्या के लगभग 70 प्रतिशत) देशवासी तीन आने (20 नये पैसे) रोज के खर्च पर जीवन निर्वाह को अभिशप्त हैं। सत्ता पक्ष की ओर से इस 'तीन आने' को 'पन्द्रह आने' बताया गया तो लोहिया ने यह कहकर उसे चुप करा दिया कि अगर मेरी बात गलत निकलती है तो मैं इस सदन से निकल जाऊंगा और सत्तापक्ष गलत निकलता है तो प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू को अपने पद पर नहीं रहना चाहिए। इसी भाषण में उन्होंने यह भी कहा था कि देश में महिलाएं, हरिजन, आदिवासी, पिछड़े, धार्मिक अल्पसंख्यक और शूद्र पांच बड़े वर्ग हैं, जिनकी आबादी कुल आबादी की नब्बे फीसदी है। इन्हें विशेष अवसर दिए बगैर तीन आने वाली स्थिति नहीं ही बदलने वाली। उनके इस भाषण को लोकसभा के इतिहास के सबसे महत्वपूर्ण बौद्धिक भाषणों में से एक माना जाता है। चुनाव तो वे 1962 के लोकसभा चुनाव में फूलपुर में जवाहरलाल नेहरू से भी हारे थे लेकिन उनकी उस हार में भी एक नैतिक चमक थी, जबकि कन्नौज सीट को लेकर हाईकोर्ट से मिली हार मतगणना में उन्हें मिली जीत की भी नैतिक चमक छीन लेने वाली थी।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं, ये उनके अपने विचार हैं।)

कर्मों से उपार्जित सुख



संकलित
दर्शन

संसार के सारे क्रियाकलाप, मानव-समाज में हो रही गति, यह सब केवल मन का ही खेल है। मनुष्य की इच्छा शक्ति का प्रकाश मात्र है। अनेक प्रकार के यंत्र, युद्धपोत आदि सभी मनुष्य की इच्छा शक्ति के विकास मात्र हैं। मनुष्य की यह इच्छाशक्ति चरित्र से उत्पन्न होती है और वह चरित्र कर्मों से गठित होता है। अतएव कर्म जैसा होगा, इच्छाशक्ति का विकास भी वैसा ही होगा। संसार में प्रबल इच्छा शक्ति संपन्न जितने महापुरुष हुए हैं, वे सभी उत्कृष्ट कर्मी थे। उनकी इच्छाशक्ति ऐसी थी कि वे संसार को भी उलट-पुलट कर सकते थे। यह शक्ति उन्हें युग-युगांतर तक निरंतर कर्म करते रहने से प्राप्त हुई थी। बुद्ध एवं ईसा मसीह में जैसी प्रबल इच्छाशक्ति थी, वह एक जन्म में प्राप्त नहीं की जा सकती और उसे हम आनुवंशिक शक्तिसंचार भी नहीं कह सकते, क्योंकि हमें ज्ञात है कि उनके पिता कौन थे। हम नहीं कह सकते कि उनके पिता के मुंह से मनुष्य जाति की भलाई के लिए शायद कभी एक शब्द भी निकला हो। जोसेफ (ईसा मसीह के पिता) के समान तो असंख्य बढ़ई आज भी हैं, बुद्ध के पिता के सदृश लाखों छोटे-छोटे राजा हो चुके हैं। अतः यदि वह बात केवल आनुवंशिक शक्तिसंचार के कारण हुई हो, तो इसका स्पष्टीकरण कैसे कर सकते हैं कि इस छोटे से राजा को, जिसकी आज्ञा का पालन शायद उसके स्वयं के नौकर भी नहीं करते थे। ऐसा एक सुंदर पुत्र-रत्न लाभ हुआ, जिसकी उपासना लगभग आधा संसार करता है?

जब कोई झूठा आरोप लगे तो धैर्य न छोड़ें



संकलित
प्रेरणा

द्वारका में एक सूर्य भक्त था सत्राजित। उसे सूर्य देव ने स्यमंतक नाम की चमत्कारी मणि दी थी। ये मणि रोज बीस तोला सोना उगलती थी। एक दिन श्रीकृष्ण ने सत्राजित से कहा कि आप ये मणि राजकोष में देंगे तो इससे मिले धन से प्रजा की अच्छी देखभाल हो सकेगी। सत्राजित ने श्रीकृष्ण को मणि देने से मना कर दिया। इस घटना के कुछ दिन बाद सत्राजित के भाई प्रसेनजित ने मणि चुरा ली। प्रसेनजित मणि लेकर जंगल में भाग गया। जंगल में एक शेर ने प्रसेनजित को मार दिया और खा गया। मणि जंगल में ही गिर गई। सत्राजित को जब प्रसेनजित और अपनी मणि नहीं मिली तो उसने श्रीकृष्ण पर आरोप लगा दिया कि कृष्ण ने ही मेरी मणि चुराई है और मेरे भाई की हत्या कर दी है। श्रीकृष्ण पर चोरी और हत्या का कलंक लग गया। श्रीकृष्ण आरोप को गलत साबित करने के लिए जंगल की ओर चल दिए। जंगल में श्रीकृष्ण को शेर के पैरों के निशान दिखे।श्रीकृष्ण समझ गए कि प्रसेनजित को शेर ने मार दिया है और मणि यहीं कहीं गिर गई है। श्रीकृष्ण मणि खोजते हुए एक गुफा में पहुंच गए। गुफा में जामवंत रहते थे। श्रीकृष्ण ने मणि मांगी तो जामवंत ने नहीं दी। इसके बाद दोनों का युद्ध हुआ। युद्ध में श्रीकृष्ण जीत गए। इसके बाद जामवंत ने मणि श्रीकृष्ण को दे दी और अपनी पुत्री जामवंती का विवाह भी भगवान के साथ कर दिया। द्वारका लौटकर श्रीकृष्ण ने वह मणि जामवंत से लेकर सत्राजित को दे दी और पूरी सच्चाई बता दी।

अंतर्मन



आज की पाती

बहुत जरूरी है मानसिक स्वास्थ्य

दस अक्टूबर को विश्व मानसिक स्वास्थ्य दिवस मनाया गया। इस दिन बहुत से देशों में सरकारी और विभिन्न सामजिक संगठन लोगों को मानसिक तनाव से बचने के बारे में जागरूक करने के लिए विभिन्न कार्यक्रम आयोजित किए गए। हर व्यक्ति का शारीरिक ही नहीं, बल्कि मानसिक स्वास्थ्य होना भी जरूरी है, तभी हम जिंदगी के मजे ले सकते हैं। हमारे देश में आज शारीरिक अस्वस्थ लोगों का आंकड़ा ही नहीं बढ़ रहा है, बल्कि मानसिक रोगी भी बढ़ रहे हैं। मानसिक रोगों होने के मुख्य कारण कई गिनाए जा सकते हैं। संभावना है कि बहुत ही कम गरीब ऐसे होंगे जो मानसिक स्वास्थ्य संकट के दायरे में आए होंगे। मानसिक स्वास्थ्य खराब होने के आंकड़े बढ़ने के कारण ही ते देश में आत्महत्या के केस बढ़ते जा रहे हैं। - विवेक वर्मा, चैरागढ़

ट्रेंड

दैवीय शक्ति की उपासना

दैवीय शक्ति की उपासना को समर्पित नवरात्रि पर्व पर सभी देशवासियों को हार्दिक शुभकामनाएं। मैं जगदम्बा की कृपा से सभी के जीवन में सुख, शांति, समृद्धि और उत्तम स्वास्थ्य का संचार हो, तथा राष्ट्रीय एकता और प्रगति का संकल्प और सुदृढ़ हो।

- नरेंद्र मोदी, प्रधानमंत्री

जनता की आवाज

'मोदीजी मोदी' ने चुनाव से पहली करके और जनता की आवाज को दबाकर भारत के लोकतंत्र की नींव को कमजोर कर दिया है। वे यहां किसान भाई छाने-पकाने की कोशिश कर ले-मोदी यह समझ नहीं पा रहे हैं कि उनका खेल, जो पिछले 10-15 सालों से चल रहा था, अब खत्म हो चुका है।

- राहुल गांधी, सांसद, लोकसभा

सपनों की उड़ान

हरियाणा की बेटी अर्पिता गोदारा ने साबित कर दिखाया है कि सपनों की उड़ान उम्र की मोहताज नहीं होती! छाबड़ा बेटी ने 'इंडिया बुक ऑफ रिकॉर्ड्स' में खेलने कम उम्र की डेडलिफ्टर के रूप में अपनी पहचान बनाई है।

- नायब सैनी, सीएम, हरियाणा

विपक्ष का दबाव

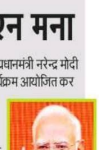
जब विपक्ष का दबाव बहुत ज्यादा बढ़ा, तो सतों-सत यादें व्यवस्थाएँ हटा दी गईं। यह सरकार किसी मतके की तरह लुढ़कती रहती है, एक सिलवटें से दूसरे किनारे, वहीं यहां, तो वहीं वहां।

- अखिलेश यादव, सांसद, सपा

करंट अफेयर

ब्रिटेन में मोदी की '25 साल की जन सेवा' का जश्न मना

ब्रिटेन में प्रवासी भारतीयों के विभिन्न संगठनों का एक समूह प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के निर्वाचित पद पर 'जनसेवा के 25 वर्ष' के उपलक्ष्य में कार्यक्रम आयोजित कर रहा है। इस कार्यक्रम की शुरुआत शनिवार को 'हाउस ऑफ लॉर्ड्स' परिसर में हुई। इसकी मेजबानी लॉर्ड रामी रेंजर ने सरदार पटेल मेमोरियल सोसाइटी के अध्यक्ष के रूप में की। कार्यक्रम में असमिया और ओडिसी के पारंपरिक नृत्य, वायलिन वादन और ओघराशि रूप से केक काटने के आयोजन के जरिए भारत की सांस्कृतिक विविधता भी प्रदर्शित की गई। आयोजकों ने एक बयान में कहा, 'इन समारोहों के केंद्र में भारत का शाश्वत दर्शन 'वसुधैव कुटुंबकम' है, जिसका अर्थ है कि पूरी दुनिया एक परिवार है। यह मार्गदर्शक सिद्धांत समावेशिता, शांति, साहस, खुशी, समृद्धि और नई शुरुआत जैसे सार्वभौमिक मूल्यों को दर्शाता है।' उन्होंने कहा, ''इस महत्वपूर्ण पड़ाव का जश्न मनाते हुए इन आयोजनों को गैर-राजनीतिक रखा गया है। इनमें सार्वजनिक सेवा, समावेशिता, शांति, साहस, खुशी, समृद्धि और सभी भारतीयों की सफलता जैसे सार्वभौमिक मूल्यों पर विशेष जोर दिया गया है।' इस बीच, ब्रिटिश भारतीय समुदाय ने 17 अक्टूबर को पश्चिमी लंदन के रुइस्लिप में एक सामुदायिक समारोह आयोजित करने की योजना की घोषणा की है।



ऑफ बीट

क्या माउथवॉश हृदय के लिए हानिकारक होता है?

सोशल मीडिया पर कुछ वीडियो में दावा किया गया है कि माउथवॉश से उच्च रक्तचाप का खतरा बढ़ सकता है और हृदय की सेहत को नुकसान हो सकता है। कुछ वीडियो के अनुसार, ऐसा इसलिए होता है क्योंकि माउथवॉश मुंह के उन "अच्छे" बैक्टीरिया को खत्म कर देता है, जो हृदय और रक्त-प्रणाली के लिए जरूरी होते हैं। यह सुनने में चौंकाने वाला लग सकता है लेकिन आपको अभी अपना माउथवॉश फेंकने की जरूरत नहीं है। सचाई इससे कहीं ज्यादा जटिल है। हमारे मुंह में कई तरह के बैक्टीरिया होते हैं। ये सभी मिलकर एक संतुलित और विविध प्रकार के 'माइक्रोबायोम' बनाते हैं, जो हानिकारक बैक्टीरिया की बढ़त को रोकते हैं, सामान्य 'मेटाबॉलिज्म' में मदद करते हैं और मुंह व शरीर की कुल सेहत को बेहतर बनाते हैं। इन बैक्टीरिया का एक अहम काम है हमारे भोजन (खासकर हरी पत्तेदार सब्जियों) में मौजूद नाइट्रेट को नाइट्राइट में बदलना। जब हम नाइट्राइट निगलते हैं, तो शरीर इसे नाइट्रिक ऑक्साइड में बदल देता है। यह प्रक्रिया नाइट्रेट-नाइट्राइट-नाइट्रिक ऑक्साइड प्रक्रिया (या एंटरोसैलिवरी प्रक्रिया) कहलाती है। यह एक उदाहरण है कि बैक्टीरिया कैसे शरीर को स्वस्थ रखने में मदद करते हैं।



अपने विचार

हरिभूमि कार्यालय

टिकरापारा, रायपुर में पत्र के माध्यम से या फैक्स : 0771-4242222, 23 पर या सीधे मेल से **hbcgpati@gmail.com** पर भेज सकते हैं।

संपादकीय

या अतिरेकाची गरज होती का?

दिल्लीत जंतरमंतर २.० करायला निघालेल्या आंदोलकांवर पोलिसी बळाचा वापर किंवा हजारोंची स्थानबद्धता याची आवश्यकता होती का किंवा आहे का, हा प्रश्न केवळ देशाचे नागरिकच नव्हे, तर थेट सर्वोच्च न्यायालयानेही विचारला आहे. पुन्हा एकदा दिल्लीची मेट्रो पूर्णपणे बंद करू नका, शांतता भंग होत असेल तरच बॅरिकेड लावा, अशा सूचना केंद्र सरकारला देण्यापलीकडे सर्वोच्च न्यायालयाने फारसे काही केले नाही. पण दिल्लीची अभूतपूर्व नाकेबंदी करून सरकारनेच हे आंदोलन सुरू होण्यापूर्वीच यशस्वी केले. मुख्य निवडणूक आयुक्त ज्ञानेश कुमार यांच्या राजीनाम्याची मागणी करण्यासाठी कॉक्रोच जनता पार्टीचे हे दुसरे आंदोलन. त्या आभासी पक्षाचे प्रमुख अभिजित दीपके व त्यांचे सहकारी, सोबत ममता बॅनर्जी, अरविंद केजरीवाल, पी. विजयन, माणिक सरकार असे माजी मुख्यमंत्री आणि यूट्यूबर ध्रुव राठी यांच्यासह हजारोंना पोलिसांनी ताब्यात घेतले. खरेतर 'सीजेपीचे' हे आंदोलन थेट विद्यार्थ्यांच्या प्रश्नांशी संबंधित नाही. उलट, ते पूर्णपणे राजकीय पक्षांचे आहे, असे म्हणता येईल. याआधी गेल्या जून-जुलैमध्ये सीजेपीने वैद्यकीय प्रवेश परीक्षा 'नीट'मधील पेपरफुटीच्या मुद्द्यावर केंद्रीय शिक्षणमंत्री धर्मेंद्र प्रधान यांच्या राजीनाम्याची मागणी करीत दिल्लीत ठिय्या दिला होता. दिल्ली पोलिसांनी आधी सामाजिक कार्यकर्ते सोनम वांगचुक यांना उपोषणस्थळावरून नाट्यमयरीत्या उचलले आणि दुसऱ्या दिवशी आंदोलक विद्यार्थ्यांवर अमानुष लाठीमार केला. त्याचे संतप्त पडसाद देशभर उमटले. ही जेन-झी पिढी आणि त्याहीपेक्षा त्यांचे पालक त्या लाठीमाराने संतापले. तेव्हा त्यांना चुचकारण्यासाठी सरकारने तरुण मुले-मुली, विद्यार्थ्यांशी संवाद साधण्याचा प्रयत्न केला. असाच प्रयत्न यावेळीही करता आला असता; कारण, निवडणूक आयोगाच्या स्पेशल इंटेन्सिव्ह रिव्हिजन (एसआयआर), अर्थात विशेष सखोल पुनरीक्षण मोहिमेतील घोळ, फॉर्म-६ मधील कथित बेकायदेशीर बदल आदी मुद्द्यांवर राजकीय पक्षांनी ज्ञानेश कुमार तसेच केंद्र सरकारविरुद्ध दंड थोपटले आहेत. काँग्रेसच्या नेतृत्वातील इंडिया आघाडीने गेल्या आठवड्यात निर्वाचन सदनवर हल्लाबोल केला आणि राष्ट्रपती द्रौपदी मुर्मू यांना निवेदन दिले आहे. त्या शिष्टमंडळात सहभागी होण्यासाठी दिल्लीला आलेल्या पश्चिम बंगालच्या माजी मुख्यमंत्री ममता बॅनर्जी दुसऱ्या दिवशी केजरीवाल व विजयन यांच्यासोबत सीजेपीच्या आंदोलनात उतरल्या. त्यामुळे सीजेपीच्या आंदोलनाला बळ मिळाले असले, तरी मुख्य निवडणूक आयुक्तांच्या राजीनाम्यासाठी प्रामुख्याने विद्यार्थ्यांच्या प्रश्नांवर काम करणारा हा पक्ष मैदानात का उतरला, याचे तर्कशुद्ध उत्तर मिळत नाही. याचा अर्थ हा विषय त्यांच्याशी संबंधित नाही, असा नाही. मतदार म्हणून नव्याने नोंदणी करताना भरावयाच्या फॉर्म-६ मध्ये आई-वडील किंवा आजी-आजोबा अशा आधीच्या दोन पिढ्यांनी पूर्वीच्या एसआयआर प्रक्रियेत सहभाग घेतल्याची अट टाकली गेल्याने जेन-झी पिढीतील अनेकांना नागरिक म्हणून मतदानापासून वंचित राहावे लागले असणार, हे नक्की. तथापि, अशी काही उदाहरणे सीजेपीने समोर आणायला हवी होती, जेणेकरून त्यांच्या आंदोलनाला भक्कम आधार मिळाला असता. तथापि, धर्मेंद्र प्रधान यांच्या राजीनाम्याने आत्मविश्वास बळावलेल्या तरुण कार्यकर्त्यांना हे बारकावे लक्षात ठेवण्याची गरज वाटली नसावी. असो. तरीदेखील भारतीय नागरिक म्हणून आंदोलनाचा मूलभूत घटनात्मक अधिकार सीजेपीच्या समर्थकांना तसेच अन्य कोणालाही आहे. जंतरमंतरवर त्यांनी शांततेने आंदोलन केले असते, तरी खूप काही बिघडले नसते. सरकारला मात्र हे मान्य नसावे. धर्मेंद्र प्रधान यांच्या राजीनाम्याच्या दुधाने तोंड पोळले असल्याने आता सरकार ताकही फुंकून पीत असावे. सरकार आक्रमक असल्याचे पाहून सरकारचे समर्थक त्याहून आक्रमक झाले आहेत. काही हिंदुत्ववादी संघटनांच्या कार्यकर्त्यांनी गेल्यावेळीही थेट पोलिसांसोबत कोवळ्या मुला-मुलींवर हल्ले केले होते. यावेळीही त्यांनी एकट्या-दुकट्या आंदोलकांना गाठून बेदम मारहाण केली. मुलींच्या अंगावरील कपडे फाडले. हे सारे पोलिसांच्या डोळ्यांदेखत, किंबहुना त्यांच्याच इशाऱ्यावर झाले. आपण पोलिसांच्या मदतीला आलो आहोत, असे हे लोक बिनदिक्कतपणे सांगतात. त्यातून सरकारची खासगी सेना जनतेविरुद्ध रस्त्यावर उतरल्याचे चित्र निर्माण झाले आहे. मुख्य निवडणूक आयुक्तांच्या निर्णयाचा वाद, त्यांच्या राजीनाम्यासाठी सुरू असलेले आंदोलन किंवा त्या आंदोलनाच्या अनुकूल-प्रतिकूल परिणामांपेक्षा ही अराजकाची स्थिती अधिक भयंकर व चिंताजनक आहे.

रखरखत्या उन्हात सुखद सावली देणारा नाना!

डोंगरातून खळाळत वाहणाऱ्या नदीची ऊर्जा, गंगेसारखा विस्तार आणि समुद्राची अथांग खोली हे सारं नानाच्या व्यक्तिमत्त्वात एकाचवेळी होतं!



डॉ. विजय दर्डा
चेअरमन, एडिटोरियल बोर्ड, लोकमत समूह

'**लोकमत** महाराष्ट्रीयन ऑफ द इयर'चा त्या वर्षीचा मंच अगदी वेगळ्या धाटणीचा होता. तत्कालीन मुख्यमंत्री एकनाथ शिंदे आणि तत्कालीन उपमुख्यमंत्री देवेंद्र फडणवीस हे नाना पाटेकर आणि माझ्या प्रश्नांना सामोरे जात होते.

सामान्य माणसाच्या मनात कायम एक प्रश्न असतो, पण कधी कुणी विचारायचं धाडस करत नाही, असा एक टोकदार प्रश्न नानाने अचानक एकनाथ शिंदे यांना विचारला -

'तुमच्या लेखी मतदार म्हणून आमची काही किंमत आहे का?'

देवेंद्र फडणवीस यांनी अतिशय समतोल उत्तर दिलं. ते म्हणाले, 'आमची किंमत तुमच्या विश्वासावर ठरते. तुमची किंमत कमी झाली, तर आमची कशी टिकेल!'

नानाचं हेच मोठं वैशिष्ट्य होतं. कुठेही, कधीही अत्यंत स्पष्टपणे आणि निर्भीडपणे प्रश्न विचारताना न डगमगणं. 'लोकमत महाराष्ट्रीयन ऑफ द इयर'चा सन्मान सोहळा असो, 'लोकमत सरपंच अवॉर्ड' असो किंवा अन्य कोणत्याही प्रसंगी झालेली भेट असो, नानाच्या मनात सर्वसामान्य माणसाविषयी एक अस्वस्थता मला नेहमीच जाणवत असे. नाटक आणि चित्रपटात नानाने साकारलेल्या अनेक व्यक्तिरेखांमधूनही ही अस्वस्थता सातत्याने दिसत राहिली. नानाच्या व्यक्तिमत्त्वाला समोर ठेवूनच या व्यक्तिरेखा घडतच्या जात आणि खास नानासाठीच संवाद लिहिले जात. ही किती मोठी गोष्ट आहे! पडद्यावर आणि स्वतःच्या खासगी आयुष्यातही नाना हीच अस्वस्थता घेऊन जगला.

'लोकमत सरपंच अवॉर्ड'च्या सोहळ्याला नाना एकदा प्रमुख पाहुणे म्हणून आला, त्यावेळी ग्रामपंचायतींना प्रोत्साहन देण्यासाठी लोकमत करत असलेल्या प्रयत्नांची प्रशंसा करताना म्हणाला होता. 'हा अत्यंत आवश्यक प्रकल्प आहे. पायाच कमकुवत असेल, तर देश विकासाच्या वाटेवर पुढे कसा जाणार?'

महाराष्ट्रातील शेतकऱ्यांची परिस्थिती आणि विशेषतः शेतकरी आत्महत्यांचा प्रश्न याबद्दल नानाच्या मनात आग धगधगत होती. आत्महत्या केलेल्या शेतकऱ्यांच्या कुटुंबांना प्रत्येकी अडीच लाख रुपये देता यावेत, यासाठी आयुष्याच्या अखेरच्या काळात त्यानं स्वतःचे पन्नास लाख रुपये दिले होते, असं मी ऐकतो! नाना कित्येक सामाजिक उपक्रमांशी घट्टपणे जोडलेला असे. कामातून वेळ मिळताच थेट डोणजे गावातलं फार्महाऊस. तिथे हा माणूस केवळ एक शेतकरी असे. तो शेती जगत होता. म्हणूनच शेतकऱ्यांचं दुःख त्याचं मन जाळत होतं.

पहिल्या नजरेत दिसायचा मात्र कडक. याच कणखरपणावर त्याने एक कविताही लिहिली होती.

'मैं हूं कड़कपन
मैं सच्चाई की रीढ़ में हूं/जज्बात की भीड़ में हूं/



अनुशासन की रगों में हूं/आदर्शों के धागों में हूं.
कहीं रवैये में हूं, तो कहीं आदतों में हूं/
कहीं तजुर्बे में हूं, तो कहीं शख्सियत में हूं.
वो ही कड़कपन/ जो नेकी में उमड़ता है/
इरादों में झलकता है/बहके को संवारता है/
वर्दी पर निखरता है!'

वर्दीवर झलकणारा हा कणखरपणा नानाने स्वतः जगूनही दाखवला. कारगिल युद्धात हा माणूस प्रत्यक्ष युद्धभूमीवरही पोहोचला, तेव्हा माझं मन आदराने भरून आलं. 'प्रहार' चित्रपट कण्यापूर्वी त्यानं तीन वर्षं लष्करी प्रशिक्षण घेतलं होतं; त्या आधाराने त्याने युद्धभूमीवर जाण्याची परवानगी मागितली. परवानगी मिळाली नाही, तेव्हा तत्कालीन संरक्षणमंत्री जॉर्ज फर्नांडिस यांच्याकडे आग्रह धरला. लष्करी गणवेश चढवून, एके-४७ हातात घेऊन तो अखेर सीमेवर पोहोचलाच!

नानाच्या जागी दुसरं कोणी असतं, तर या सगळ्याचा भरपूर गाजावाजा केला असता; पण नानाने ते कटाक्षाने टाळलं. स्वतःच्या सामाजिक कार्याबद्दलही तो स्वतःहून कधी काही बोलत नसे. खऱ्या अर्थाने कर्मवीर होता नाना.

नाना शास्त्रीय संगीताचाही उत्तम जाणकार होता. स्वतः स्वयंपाक करून मित्रांना जेवू घालण्याची हौस होतीच. एका भेटीत नानाने मला त्याच्या शेतावर येण्याचं निमंत्रण दिलं होतं. हा योग आता कधीच येणार नाही, आणि ते मनाशी कायम सलत राहील.

नाना, तुझी खूप आठवण येईल. एका स्वाभिमानी माणसाची उणीव संपूर्ण जगाला जाणवेल. तुझ्यासारख्या उमद्या, दिलदार माणसाला निरोप देताना शब्द अपुरे आहेत, मित्रा!

ट्रम्पसाहेब अमेरिकेवरही टॅरिफ लावणार...?

अमेरिकेची डिझेलची गरज भागवण्यासाठी डोनाल्ड ट्रम्पसाहेब रशियाकडून डिझेल आयात करणार असल्याची बातमी ऐकली आणि माझ्या काळजात चर्र झालं! आता अशी कोणती निकड निर्माण झाली? यामुळे त्यांच्या प्रतिष्ठेला धक्काबिक्का नाही का बसणार? मला पुतीनसाहेबांची अजिबात चिंता नाही; त्यांना तर काय, जगभर तेल विकायचंच आहे. खरी पंचाईत आहे ती अमेरिकेची!

ट्रम्पसाहेबांनी नुकतीच एका आदेशावर स्वाक्षरी केली आहे. या आदेशानुसार, रशियाकडून तेल खरेदी करणाऱ्या कोणत्याही देशावर ते अतिरिक्त टॅरिफ लावणार आहेत. आता माझ्या मनात प्रश्न निर्माण होतो की, 'ट्रम्पसाहेब अमेरिकेवरही अतिरिक्त टॅरिफ लावणार का?' पण मग लगेच मी माझ्या मनाला समजावलं की, बाबा रे, ट्रम्पसाहेब बॉस आहेत! आणि व्यवस्थेचे नियम दोनच असतात.

नियम क्रमांक १ : बॉसचे नेहमी बरोबरच असते.

नियम क्रमांक २ : तुम्ही वॉसही सहमत नसाल, तर कृपया नियम क्रमांक १ पुन्हा वाचा!

vijaydarda@lokmat.com
डॉ. विजय दर्डा यांचे समग्र लेखन वाचण्यासाठी स्कॅन करा :

प्रासंगिक

राजपथ ते लोकपथ : संघर्ष, राष्ट्रसेवेचा महत्त्वाचा अध्याय

राजवैभवाचा वारसा, विचारधारेवरील निष्ठा आणि जनतेशी जोडलेली बांधिलकी- राजमाता विजयाराजे शिंदे यांची आज जयंती. त्यानिमित्त विशेष लेख.



आशिष प्रताप सिंह राठौड
अध्यक्ष, माधौ महाराज स्मृती फाउंडेशन

राजकारणात पदे मिळवणारे अनेक असतात; पण स्वतःच्या विचारांनी आणि कार्याने स्वतंत्र ओळख निर्माण करणारे मोजकेच. राजमाता विजयाराजे शिंदे या अशाच व्यक्तिमत्त्वांपैकी एक. ग्वाल्हेरच्या राजघराण्याची महाराणी ते भारतीय जनसंघ आणि भारतीय जनता पक्षाच्या ज्येष्ठ नेत्या हा त्यांचा प्रवास केवळ सत्तेच्या राजकारणाची कथा नाही. वैचारिक निष्ठा, संघर्ष आणि सार्वजनिक जीवनातील बांधिलकीचा तो इतिहास आहे.

१२ ऑक्टोबर १९९१ रोजी मध्य प्रदेशातील सागर येथे जन्मलेल्या राजमातांचे मूळ नाव लेखा दिव्येश्वरी देवी. १९४१ मध्ये ग्वाल्हेरचे महाराज जीवाजीराव शिंदे यांच्याशी विवाह झाल्यानंतर त्या ग्वाल्हेरच्या महाराणी बनल्या. मात्र, त्यांचे आयुष्य राजमहालाच्या चौकटीत अडकून राहिले नाही. १९६१ मध्ये पतीच्या निधनानंतर कौटुंबिक जबाबदाऱ्यांसह आयुष्याला नव्याने सामोरे जाण्याचे आव्हान त्यांच्यापुढे उभे राहिले. त्यांनी या परिस्थितीला 'मर्यादा' बनू न देता सार्वजनिक जीवनात स्वतःची भूमिका निश्चित केली. राजघराण्याची प्रतिष्ठा ही त्यांची ओळख होती; पण राजकारणात त्यांनी स्वतःच्या विचारांच्या बळावर स्थान निर्माण केले.

१९५७ मध्ये गुना लोकसभा मतदारसंघातून काँग्रेसच्या उमेदवार म्हणून निवडून येत त्यांनी संसदीय राजकारणात प्रवेश केला. १९६२ मध्ये त्या ग्वाल्हेरमधून लोकसभेवर निवडून गेल्या. पुढे काँग्रेसशी वैचारिक मतभेद झाल्यानंतर त्यांनी भारतीय जनसंघाचा मार्ग स्वीकारला. हा केवळ पक्षबदल नव्हता, तर आपल्या राजकीय भूमिकेनुसार स्वतंत्र मार्ग निवडण्याचा निर्णय होता.

काँग्रेसचे वर्चस्व असलेल्या काळात विरोधी राजकारणाला बळ देण्यात राजमातांनी महत्त्वाची भूमिका बजावली. १९६७ मध्ये त्या मध्य प्रदेश विधानसभेवर निवडून गेल्या. भारतीय जनसंघाच्या विस्तारासाठी त्यांनी आपली सामाजिक प्रतिष्ठा, राजकीय अनुभव आणि जनसंपर्क यांचा उपयोग केला. १९८० मध्ये भारतीय जनता पक्षाची स्थापना झाल्यानंतर उपाध्यक्ष म्हणून त्यांनी संघटनात्मक जबाबदारी सांभाळली.



२५ जून १९७५ रोजी देशात आणीबाणी लागू झाली. नागरिकांच्या स्वातंत्र्यावर निर्बंध आले आणि अनेक विरोधी नेत्यांना तुरुंगात डांबण्यात आले. राजमाता विजयाराजे शिंदे यांनाही अटक करून तिहार तुरुंगात ठेवण्यात आले. राजवैभवाच्या वातावरणातून आलेल्या व्यक्तीला तुरुंगवासाचे आव्हान स्वीकारणे सोपे नव्हते. मात्र, हा प्रसंग त्यांच्या राजकीय जीवनातील संघर्षाचा महत्त्वाचा भाग ठरला.

राजमातांच्या कार्याचा आणखी एक महत्त्वाचा पैलू शिक्षणाशी संबंधित होता. ग्वाल्हेर येथील सिंधिया कन्या विद्यालयाच्या संस्थापक अध्यक्ष म्हणून त्यांनी योगदान दिले. बालिका शिक्षण आणि महिला सक्षमीकरणाबद्दल त्यांना विशेष आस्था होती. शिशू मंदिराच्या स्थापनेशीही त्या संबंधित होत्या.

ग्वाल्हेरच्या सामाजिक आणि राजकीय जीवनाशी त्यांचे नाते घट्ट होते. राजघराण्याचा ऐतिहासिक वारसा आणि लोकशाहीतील लोकप्रतिनिधित्व यांचा संगम त्यांच्या जीवनात दिसतो. त्यांनी हा वारसा केवळ प्रतिष्ठेपुरता न ठेवता सार्वजनिक जीवनाशी जोडला. राजमाता विजयाराजे शिंदे यांचे जीवन आजच्या राजकारणापुढे कोणती मूलभूत प्रश्न उभे करते. विचारधारेचे स्थान काय? सार्वजनिक पद हा अधिकार आहे की जबाबदारी? प्रतिकूल परिस्थितीत तत्त्वनिष्ठा कशी टिकवायची आणि सामाजिक प्रतिष्ठेचा उपयोग जनहितासाठी कसा करायचा?

त्यांच्या विचारधारेशी सहमत असणे किंवा असहमत असणे हा लोकशाही चर्चेचा भाग आहे. मात्र, त्यांच्या राजकीय संघर्षाचा, संघटनात्मक योगदानाचा आणि सार्वजनिक कार्याचा अभ्यास पूर्वग्रहांऐवजी ऐतिहासिक तथ्यांच्या आधारे होणे आवश्यक आहे. २५ जानेवारी २००१ रोजी त्यांचे निधन झाले. त्यांचे आत्मचरित्र 'राजपथ से लोकपथ' त्यांच्या जीवनाचा आणि राजकीय अनुभवांचा महत्त्वाचा दस्तऐवज आहे. राजपथापासून लोकपथापर्यंतचा त्यांचा प्रवास हा भारतीय राजकारणातील संघर्ष, वैचारिक दृढता आणि राष्ट्रसेवेचा महत्त्वपूर्ण अध्याय म्हणून स्मरणात राहील.

जगभर

अमेरिकेत मृत्युदंडाचं प्रथमच थेट टीव्ही प्रक्षेपण?

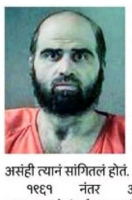
फाशी, मृत्युदंड, एखाद्या गुन्ह्याराला सर्वांसमक्ष जाहीरपणे संपवणं.. हे प्रकार जगभरातून हळूहळू हद्दपार होत असताना, त्यांचं प्रमाण कमी कमी होत असताना अमेरिकेत मात्र एका प्रकरणाच्या निमित्तानं एक वेगळंच चित्र समोर येतं आहे.

अमेरिकेत प्रथमच मृत्युदंडाचं थेट दूरचित्रवाणी प्रक्षेपण केलं जाणार असल्याचा दावा करण्यात आला आहे. अमेरिकेचा माजी लष्करी मेजर निदाल हसन याला गोळ्या घालून मृत्युदंड देण्यात येणार आहे. २००९ मध्ये टेक्ससमधील लष्करी तळावर त्यानं केलेल्या गोळीबारात १३ सैनिकांचा मृत्यू झाला होता. आता ३ डिसेंबर रोजी त्याच ठिकाणी हसनला गोळ्या घालून मृत्युदंड देण्याची योजना असल्याचं वृत्त आहे.

अमेरिकेचे संरक्षणमंत्री पीट हेगसेथ यांनी या शिक्षेचं थेट प्रक्षेपण केलं जाईल, असं सांगितल्याचं वृत्त आहे. सर्वसामान्य नागरिकांनाही ही घटना पाहता यावी, हा त्यामागचा उद्देश असल्याचं सांगितलं जातं. ही शिक्षा अंमलात आली तर गेल्या १०० वर्षांत अमेरिकेतील सार्वजनिकरीत्या दिल्या जाणाऱ्या मृत्युदंडाच्या घटनांपैकी एक महत्त्वाची घटना ठरेल.

५ नोव्हेंबर २००९ रोजी लष्करातील मानसोपचारतज्ज्ञ मेजर निदाल हसन हा पिस्तूल घेऊन फोर्ट हूड या लष्करी तळावर पोहोचला. तिथं त्यानं सैनिक आणि इतर लोकांवर अचानक गोळीबार केला. लष्करी न्यायालयात त्यानं हत्यांची कबुली दिली. २०१३ मध्ये पूर्वनियोजित हत्या आणि हत्येचा प्रयत्न, अशा एकूण ४५ आरोपांमध्ये त्याला दोषी ठरवण्यात आलं.

हसननं या हल्ल्याबद्दल कोणताही पश्चात्ताप व्यक्त केला नाही. लष्करी मानसिक आरोग्यविषयक समितीसमोर बोलताना त्यानं हल्ल्यात स्वतःचाही मृत्यू झाला असता तर आपण हुतात्मा झालो असतो, असं म्हटलं होतं. मृत्युदंडाची शिक्षा झाली तरी आपण स्वतःला हुतात्माच मानू, असंही त्यानं सांगितलं होतं.



१९६१ नंतर अमेरिकेच्या लष्करी न्यायव्यवस्थेअंतर्गत मृत्युदंडाची शिक्षा मिळणारा हसन हा पहिला व्यक्ती ठरेल. यापूर्वी लष्करी न्यायव्यवस्थेत जॉन ए. बेनेट या सैनिकाला मृत्युदंड देण्यात आला होता. हेगसेथ यांनी एका मुलाखतीत सांगितलं की, सैनिकांची एक तुकडी हसनला गोळ्या घालून मृत्युदंड देईल. ही प्रक्रिया सार्वजनिक केली जाईल आणि लोकांना ती पाहता येईल, याची खात्री केली जाईल. अशा कृत्यांचे गंभीर परिणाम होतात, हे लोकांना समजलं पाहिजे, अशी त्यांची भूमिका आहे.

अमेरिकेच्या लष्करी कायद्यानुसार, दोषीला मृत्युदंड देण्यासाठी राष्ट्राध्यक्षांची मंजूरी आवश्यक असते. मात्र, मंजूरी मिळाल्यानंतरही कायदेशीर अपील केल्यास शिक्षेची अंमलबजावणी स्थगित होऊ शकते. याआधी मार्च २०१३ मध्ये चीनच्या सरकारी दूरचित्रवाणी वाहिनीनं चार परदेशी तस्करांना मृत्युदंड देण्यापूर्वीच्या क्षणांचं थेट प्रक्षेपण केलं होतं. १३ चिनी नागरिकांची हत्या केल्याप्रकरणी हे चौघे दोषी ठरले होते. मात्र, त्यांना विषारी इंजेक्शन देऊन मृत्युदंड देण्याचं दृश्य दाखवण्यात आलं नव्हतं. सप्टेंबर २०१७ मध्ये इराणच्या सरकारी संकेतस्थळावर इस्माईल जाफरजादेह याला फाशी दिल्याचा व्हिडीओ प्रसिद्ध करण्यात आला होता. २२ फेब्रुवारी २०२४ रोजी तालिबानने अफगाणिस्तानच्या गझनी शहराजवळ एका क्रीडांगणात दोन दोषींना गोळ्या घालत्या होत्या. त्यातीलही हजारो लोक उपस्थित होते.

करनीती

जीएसटी रिफंडमधील प्रस्तावित बदल



अर्जुन (काल्पनिक पात्र): कृष्णा, जीएसटी समितीने यावेळी कोणते बदल सुचवले आहेत?

कृष्ण (काल्पनिक पात्र): अर्जुना, या बैठकीत प्रक्रिया सोपी करण्यावर भर आहे. रिटर्न, नोंदणी, आयटीसी आणि रिफंड यांबाबत अनेक बदल सुचवले आहेत. नोटिफिकेशन आल्यावरच हे बदल लागू होतील.

अर्जुन : रिफंडमध्ये नेमके काय बदलणार आहे?

कृष्ण : केंश लेजरमधील जास्तीची शिल्लक, तसेच काही अटी पूर्ण केल्यास निर्यात व SEZ पुरवठा (झिरो-रेटेड) आणि इन्व्हर्टेड ड्युटीचे रिफंड सिस्टमद्वारे आपोआप होतील. हे दोन टप्प्यांत लागू होईल.

अर्जुन : या दोन्ही टप्प्यात काय होईल?

कृष्ण : इलेक्ट्रॉनिक केंश लेजरमधील जास्तीची रक्कम अधिकाऱ्याशिवाय पूर्ण परत मिळेल. पोचपावती किंवा त्रुटी मेमोसाठीची मुदत १५ दिवसांवरून १० दिवस होईल आणि झिरो-रेटेड व इन्व्हर्टेड ड्युटी दाव्यांमध्ये जोखीम तपासून सिस्टिमच ९०% रक्कम तात्पुरती मंजूर करेल.

अर्जुन : स्कॅन केलेली कागदपत्रे अजूनही लागतील का?

कृष्ण : नाही. फॉर्म GST RFD-01 मध्ये माहिती सिस्टिमला वाचता येईल अशा स्वरूपात भरली जाईल, त्यामुळे स्कॅन अपलोडची गरज नाही. पण सिस्टिम थेट माहिती वाचणार असल्याने इनव्हॉइस, शिपिंग बिल, निर्यातीचे पैसे मिळाल्याची माहिती आणि GSTR-1 व GSTR-3B मधील आकडे अगदी जुळले पाहिजेत. फरक असल्यास तो आता सिस्टिमच पकडेल.

- उमेश शर्मा, चार्टर्ड अकाउंटंट

समकालीन महत्त्वाचे मुद्दे मांडणारी, नवी चर्चा सुरू करणारी वाचक-पत्रे या स्तंभामध्ये प्रसिद्ध केली जातील. आपली पत्रे येथे पाठवा : janman@lokmat.com

तिरकस आणि चौकस

गजानन घोंगडे



लोकमत दीपोत्सव २०२६
या वर्षीच्या अंकात ०१



आपण तो मिळवतो, साठवतो,
पुरवतो, उरवतो, उडवतो, गुंतवतो,
त्याच्यासाठी जीव काढतो, त्याच्यापाठी धावतो,
घाम गाळतो, कष्ट उपसतो, धडपडतो, भांडतो,
कोर्टकचेऱ्या करतो, एकमेकांच्या मानेवर बसतो,
जीव घेतो आणि देतोही;
...पण कधी थांबून त्याचा विचार करतो का?

पैसा म्हणजे फक्त नोटा नव्हेत, बँकेच्या खात्यातले आकडेही नव्हेत.
पैसा म्हणजे पॉवर. पैसा म्हणजे स्वप्ने. काळजी. भीती.
पैसा म्हणजे जगण्याची किंमत आणि मूल्यही. पैसा म्हणजे आशा... आणि प्रेमही!

हा पैसा जन्माला कसा आला? तो असला तर काय बदलते? नसला तर काय हरवते?
... आणि अचानक घरात शिरला, तर नाकातोंडात पाणी का जाते?

ज्यांच्याकडे पुष्कळ असतो, ती माणसे त्याचे काय करतात?
ज्यांच्याकडे अजिबातच नसतो, ती माणसे कसे दिवस काढतात?

चला शोधूया, या दिवाळीत!

तीन लाख प्रतींचा खप ओलांडणारा अंक नव्हे, उत्सव!

पाने सुमारे : २५६ | मूल्य : ४९९ रुपये | प्रसिद्धी : दिवाळीआधी | फोन आणि 91120 50500 | अधिक माहिती, ऑनलाईन खरेदी: deepotsav.lokmat.com lokmatdeepotsav

हे पत्र लोकमत मीडिया प्रा. लिमिटेडच्या वतीने मुद्रक व प्रकाशक **बालाजी मुळे** यांनी प्लॉट नं. ए - ८५ इंडस्ट्रियल एरिया, एम.आय.डी.सी., महापे, नवी मुंबई येथे मुद्रित करून 'लोकमत', पूर्वी पार्क, सेक्टर ३०, सानपाडा, नवी मुंबई कार्यालय - ४००७०७ येथून प्रसिद्ध केले. ● दूरध्वनी क्र : ०२२ ४६०४५७८४
● **मुंबई कार्यालय :** लोकमत मीडिया प्रा. लिमिटेड, तिसरा मजला, पारिजात हाउस, प्लॉट नं. १०७६, आपटे इंडस्ट्रियल इस्टेट, लक्ष्मीनरसिंग पपन मार्ग, डॉ. ई मोझेस रोडसमोर, गांधीनगर, वरळी, मुंबई, ४०००९८. ● दूरध्वनी क्र : ०२२- ४६०३५३०, ०२२- ४७७०७४४६ ● **ठाणे कार्यालय :** वेस्टर्न वूड्स, श्री गजानन महाराज चौक, वारकरी भवनाजवळ, ठाणे, फोन : २५४५५९०५, २५३८५७७४ ● **नवी मुंबई कार्यालय :** पृथ्वी पार्क, सेक्टर ३०, सानपाडा, नवी मुंबई ४००७०७. फोन : ०२२ ४६०४५७८४ ● संस्थापक संपादक : **स्व. जवाहरलाल दर्डा** ● मानद संपादिका : **श्रीमती उषाताई दर्डा** ● कार्यकारी संपादक : **डॉ. विजय दर्डा** ● एडिटर इन चीफ : **राजेंद्र दर्डा** ● एडिटर इन चीफ : **राजेंद्र दर्डा** ● समूह संपादक : **विजय बाविस्कर**
● संपादक : **अतुल कुलकर्णी** (*पी. आर. बी. कायद्यानुसार संपादकीय जबाबदारी यांची आहे.) 'लोकमत'मधील लेखांचे हक्क राखून ठेवले आहेत. लोकमत ® हे चिन्ह लोकमत मीडिया प्रायव्हेट लि. चे. व्यापारचिन्ह आहे.

सख्ती की सीमा

लोकतंत्र का अर्थ केवल चुनाव के जरिए सरकार का चयन करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह नागरिकों को अपनी बात कहने, सत्ता की नीतियों पर सवाल उठाने और असहमति व्यक्त करने का अधिकार भी देता है। किसी भी लोकतांत्रिक व्यवस्था की मजबूती इस बात से तय होती है कि वह अपने आलोचकों के प्रति कितना सहिष्णु व्यवहार करती है तथा असहमति और सुधार की मांग से जुड़ी जनभावना को कितना सम्मान दिया जाता है। जाहिर है, इस प्रक्रिया में समस्याओं को समझने और संवाद के माध्यम से समाधान निकालने की जरूरत होती है। मगर, शनिवार को काकरोच जनता पार्टी (काजपा) के विरोध प्रदर्शन से निपटने के लिए देश की राजधानी को जिस तरह सुरक्षाबलों की छावनी में तब्दील किया गया तथा रेल, मेट्रो और इंटरनेट सेवाओं पर सीमित प्रतिबंध लगाए गए, उससे सरकार की नीति और नीयत पर सवाल उठना स्वाभाविक है। कानून व्यवस्था के लिए एहतियाती कदम उठना जरूरी हो सकता है, लेकिन अत्यधिक सख्ती बरतने को असहमति के स्वर को दबाने के प्रयास के रूप में ही देखा जाएगा।

देश का संविधान प्रत्येक नागरिक को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देता है। नागरिकों को शांतिपूर्ण तरीके से विरोध जताने और अपनी मांगें रखने का अधिकार है। सरकार की नीतियों पर असहमति जताने के लिए पहले भी जनांदोलन होते रहे हैं। इस बार सवालों के घेरे में हैं मतदाता सूची का विशेष गहन पुनरीक्षण और चुनाव आयोग के मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार। इन्हीं के विरोध में काजपा ने दिल्ली में प्रदर्शन का आह्वान किया था। मगर कानून व्यवस्था बिगड़ने का हवाला देते हुए जितने बड़े पैमाने पर सुरक्षाबलों की तैनाती की गई, प्रदर्शनकारियों को दिल्ली के जंतर मंतर पर पहुंचने से रोकने के लिए जो जतन किए गए और हजारों की संख्या में लोगों को हिरासत में लिया गया, वह सरकार के रवैये पर गंभीर सवाल उठता है। काजपा के प्रमुख नेताओं अभिजीत दिपके, सौरव दास और आशुतोष रांका को हवाई अड्डे पर विमान के अंदर से ही महिला पुलिस कर्मियों द्वारा हिरासत में लेने की खबरें भी जनमानस को असहज कर रही हैं।

प्रश्न यह भी है कि आखिर सरकार को इतनी ज्यादा सख्ती बरतने की जरूरत क्यों महसूस हुई? क्या यह सब वास्तव में कानून व्यवस्था बिगड़ने की आशंका से किया गया या फिर इसके पीछे कोई और वजह थी! बड़ी संख्या में रेलगाड़ियों को रद्द किए जाने, मेट्रो के कई स्टेशनों को बंद करने और जगह-जगह वाहनों की जांच से लगे जाम के कारण आम लोगों को जो परेशानी हुई, उसकी जिम्मेदारी कौन लेगा? इस सवाल का जवाब देने के बजाय सत्तारूढ़ भाजपा यह दावा करके गदगद हो रही है कि दिल्ली को बंधक बनाने के इरादे से किया गया विरोध प्रदर्शन पूरी तरह विफल रहा। बहरहाल, इस दावे की सच्चाई का पता तो तभी चलता, जब प्रदर्शन की अनुमति दी गई होती, लेकिन सरकार की ओर से काजपा समर्थकों को रोकने के लिए जिस तरह के कदम उठाए गए, उससे दिल्ली जरूर बंधक बनती दिखी। सुरक्षाबलों की सख्ती से विरोध के स्वर को कुछ समय के लिए शांत किया जा सकता है, लेकिन समस्या का स्थायी समाधान संवाद से ही संभव है, जिसकी पहल की संभावना फिलहाल सरकार की ओर से नजर नहीं आ रही है। इससे पहले इसी मुद्दे पर विपक्ष दल कांग्रेस के नेताओं ने भी चुनाव आयोग से मिलकर अपनी बात रखने की कोशिश की थी और उसके बाद राष्ट्रपति के समक्ष भी मांग रखी, लेकिन अभी तक सवालों का कोई संतोषजनक जवाब सामने नहीं आया है।

शांति का सम्मान

जिस दौर में दुनिया का एक बड़ा हिस्सा युद्ध की त्रासदी से जूझ रहा है, मानवता के सामने व्यापक संकट खड़ा हो रहा है, तो ऐसी स्थिति में सबसे ज्यादा जरूरत शांति की ही महसूस हो रही है। मगर युद्ध में शामिल पक्षों को न तो मानवता का प्रश्न महत्त्वपूर्ण लगता है, न ही वे अंतरराष्ट्रीय कानूनों का खयाल रखना जरूरी समझते हैं। छीजती संवेदनाओं और उपेक्षित कायदों के इसी दौर में नवनेथम नवी पिल्लई को 2026 का नोबेल शांति पुरस्कार दिया जाना बेहद अहम है। उन्हें अंतरराष्ट्रीय जगत का यह सर्वश्रेष्ठ माना जाने वाला सम्मान इसीलिए दिया गया है कि उन्होंने दुनिया भर में शांति और अंतरराष्ट्रीय कानूनों को बढ़ावा देने के प्रयासों में अहम भूमिका निभाई है। दरअसल, नवी पिल्लई का जीवन और उनके प्रयास वैश्विक शांति तथा सद्भाव के साथ-साथ अंतरराष्ट्रीय समुदाय के लिए बनाए गए कानूनों की अहमियत को दर्शाते हैं। उनके सरोकार की जड़ें उनकी जीवन-स्थितियों से भी जुड़ी हैं।

उनका भारत से भी इस रूप में ऐतिहासिक और सांस्कृतिक नाता है कि उनके दादा 1890 के दशक में ब्रिटिश औपनिवेशिक काल में भारत से बंधुआ मजदूर के रूप में दक्षिण अफ्रीका चले गए थे। उनका जन्म रंगभेद के दौर में दक्षिण अफ्रीका के डरबन में भारतीय तमिल मूल के एक परिवार में हुआ था। बाद में वे एक वकील बनीं और कानून के क्षेत्र में उन्हें नई राह खोलने वाली शख्सियत माना गया। मगर इस बीच उन्होंने गहरे संस्थागत भेदभाव, अलगाववाद और बहिष्कार का भी सामना किया। जाहिर है, इस सबका असर उनके समूचे व्यक्तित्व और सोचने-समझने के ढांचे पर पड़ा। इसी का प्रतिबिंब इस रूप में सामने आया कि पिल्लई ने दुनिया भर में शांति और सद्भाव के मूल्यों का विस्तार करना और समूची मानवता के हित में अंतरराष्ट्रीय कानूनों को बढ़ावा देना अपने जीवन का एक हिस्सा बना लिया। नोबेल शांति पुरस्कार उनके प्रयासों की स्वीकार्यता है और इस तरह दुनिया भर को यह संदेश देने की कोशिश भी कि कुछ देश भले ही विवादों के हल के लिए युद्ध को जरूरी मानते हैं और इसके लिए वे अंतरराष्ट्रीय कानूनों को भी ताक पर रखने से नहीं हिचकते, लेकिन आखिरकार वे थकेंगे और उन्हें शांति की शरण में आना होगा।

जनकल्याण के समांतर मुफ्त की सौगात



लोक कल्याण और चुनावी सौगात में फर्क उसके उद्देश्य, लागत और परिणाम से तय होना चाहिए। चुनावी वादों को राजकोषीय पारदर्शिता और जवाबदेही की कसौटी पर परखा जाना जरूरी है।

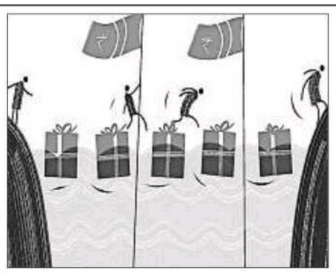
सुधीर कुमार

देश के विकास में एक बड़ी चुनौती लोक कल्याण और राजकोषीय विवेक के बीच संतुलन बनाने की है। एक ओर आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सहायता जैसी व्यवस्थाएं हैं, तो दूसरी ओर चुनावों में तत्काल लाभ वाले वादे भी सामने आते हैं। ऐसे में यह तय करना जरूरी है कि लोक कल्याण कहां तक सामाजिक अधिकार है और किस बिंदु पर वह राजकोषीय विवेक की परीक्षा बन जाता है। भारतीय संविधान कल्याणकारी राज्य की दिशा स्पष्ट करता है। प्रस्तावना सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय का संकल्प रखती है। साथ ही ऐसी सामाजिक व्यवस्था बनाने का मार्ग प्रशस्त किया गया है, जिसमें लोक कल्याण बढ़े और आय, सुविधाओं तथा अवसरों की असमानता न रहे। इसके अलावा आजीविका, संसाधनों के व्यापक हित में वितरण और आर्थिक व्यवस्था में धन के अत्यधिक संकेंद्रण को रोकने जैसे उद्देश्यों का उल्लेख भी किया गया है। ये प्रावधान न्यायालय में सीधे प्रवर्तनीय नहीं हैं और संविधान इन्हें शासन में मूलभूत मानता है। इसलिए सामाजिक सुरक्षा को महज राजनीतिक दान समझना संविधान की कल्याणकारी दृष्टि को संकुचित करने जैसा होगा।

इसी संदर्भ में जीवन के अधिकार को भी केवल शारीरिक अस्तित्व तक सीमित नहीं माना गया है। संविधान जीवन एवं व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करता है और छह से चौदह वर्ष के बच्चों के लिए निशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान करता है। सर्वोच्च न्यायालय ने भी एक महत्त्वपूर्ण फैसले में गरिमापूर्ण जीवन को भोजन, वस्त्र, आवास जैसी बुनियादी आवश्यकताओं से जोड़ा था। ऐसे में गरीब नागरिकों को न्यूनतम गरिमा के साथ जीवन जीने में सक्षम बनाने वाली सार्वजनिक व्यवस्था को सामान्य चुनावी 'मुफ्त सौगात' मानना उचित नहीं होगा। यहीं से सामाजिक सुरक्षा और मुफ्त सौगात के बीच जरूरी भेद उभरता है। अच्छी सामाजिक नीति वह है, जो व्यक्ति की क्षमता बढ़ाती है, जोखिम कम करती है और उसे भविष्य में अधिक आत्मनिर्भर बनने का अवसर देती है।

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य, पोषण, स्वच्छ पेयजल, रोजगार गारंटी और गरीबों के लिए लक्षित सहायता सार्वजनिक निवेश हैं। इनका लाभ पूरे समाज और अर्थव्यवस्था को मिलता है। इसके विपरीत ऐसी योजनाओं पर सवाल उठना स्वाभाविक है, जिनमें लाभ का संबंध किसी स्पष्ट सामाजिक लक्ष्य, आवश्यकता या दीर्घकालिक क्षमता निर्माण से नहीं है। मगर किसी वस्तु या सेवा का मुफ्त होना अपने आप में उसे लोकलुभावन या अनुत्पादक नहीं बना देता। मुफ्त बिजली की सीमित सहायता, छात्र को डिजिटल उपकरण, किसान को सिंचाई सहायता या महिला को परिवहन में रियायत के प्रभाव अलग-अलग हो सकते हैं। उनका मूल्यांकन पात्रता, लागत और परिणामों के आधार पर होना चाहिए। महत्त्वपूर्ण है कि खर्च का उद्देश्य क्या है और उससे सार्वजनिक हित कितना हासिल होता है।

चुनावी घोषणापत्रों को लेकर कानून और न्यायपालिका का रुख भी यही जटिलता दिखाता है। वर्ष 2013 में एक मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा था कि चुनावी घोषणापत्र के वादों को जनप्रतिनिधित्व कानून, 1951 की धारा 123 के तहत भ्रष्ट आचरण नहीं माना जा सकता। साथ ही अदालत ने निर्वाचन



आयोग को राजनीतिक दलों से परामर्श कर घोषणापत्रों के लिए दिशा-निर्देश बनाने को कहा था। निर्वाचन आयोग के वर्तमान दिशा-निर्देश कल्याणकारी योजनाओं के वादों पर आपत्ति नहीं करते, लेकिन राजनीतिक दलों से अपेक्षा करते हैं कि वे ऐसे वादों से बचें, जो चुनाव प्रक्रिया की शुचिता या मतदाताओं के स्वतंत्र निर्णय को प्रभावित करें। मुफ्त सौगातों को लेकर वर्ष 2022 में सर्वोच्च न्यायालय के सामने उठी बहस ने इस प्रश्न को फिर राष्ट्रीय विमर्श के केंद्र में ला दिया। मुद्दा केवल यह नहीं था कि कोई योजना मुफ्त है या नहीं, बल्कि यह था कि ऐसी घोषणाओं के वित्तीय प्रभाव, राजकोषीय स्थिरता और चुनावी समानता का आकलन कैसे हो।

> **भारतीय लोकतंत्र में सामाजिक सुरक्षा और चुनावी सौगात के बीच अंतर करना जरूरी है। भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, पोषण और कमजोर वर्गों के लिए लक्षित सहायता जैसी योजनाएं नागरिक की गरिमा और अवसर बढ़ाने वाली सार्वजनिक जिम्मेदारियां हैं। वहीं, ऐसी घोषणाओं पर सवाल जरूरी है, जिनका स्पष्ट सामाजिक लक्ष्य या दीर्घकालिक लाभ न हो। कल्याणकारी योजनाओं का मूल्यांकन केवल खर्च से नहीं, परिणाम से होना चाहिए। किसी सुविधा के मुफ्त होने मात्र से उसे अनुत्पादक नहीं माना जा सकता, उसकी उपयोगिता, पात्रता, लागत और परिणाम देखना जरूरी है। चुनावी वादों की कसौटी भी यही होनी चाहिए कि वे नागरिक को अधिकार और अवसर दे रहे हैं या तत्काल लाभ का आकर्षण पैदा कर रहे हैं।**

जोखिम तब है, जब ऐसी प्रतिबद्धताएं जताई जाएं, जिनके स्थायी राजस्व स्रोत न हों और जिनका भार शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढांचे या रोजगार सृजन पर पड़े। हर सब्सिडी को आर्थिक अपव्यय कहना भी उचित नहीं। कृषि, खाद्य, ऊर्जा या परिवहन में लक्षित सहायता सामाजिक स्थिरता और आर्थिक अवसरों का साधन बन सकती है। इसलिए सवाल 'सब्सिडी बनाम विकास' का नहीं, बल्कि बेहतर प्राथमिकताओं, लक्षित लाभ और टिकाऊ वित्त का है। दुनिया के कुछ अनुभव इस बहस को उपयोगी संदर्भ देते हैं। ब्राजील का बोल्सा फेमीलिया नकद सहायता को शिक्षा और स्वास्थ्य संबंधी शर्तों से जोड़ने वाला प्रमुख उदाहरण रहा है। विश्व बैंक के अनुसार, इस कार्यक्रम में विद्यालय में उपस्थिति और स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़ी शर्तों की निगरानी हुई तथा शिक्षा और स्वास्थ्य के कुछ परिणामों में सुधार दर्ज हुआ। यह माडल नकद सहायता को मानव पूंजी से जोड़ने का उदाहरण है।

दक्षिण अफ्रीका का संवैधानिक ढांचा भी एक अलग दृष्टि देता है। वहां स्वास्थ्य, भोजन, पानी और सामाजिक सुरक्षा जैसे अधिकारों की प्रगतिशील प्राप्ति का दायित्व राज्य पर है, लेकिन संविधान इसे उपलब्ध संसाधनों के भीतर उचित विधायी और अन्य उपायों से जोड़ता है। यह सामाजिक अधिकारों और वित्तीय क्षमता के बीच संतुलन बनाता है। भारत में इसी संतुलन को संस्थागत रूप देने की जरूरत है। चुनावी घोषणापत्रों में प्रत्येक बड़े वित्तीय वादे की अनुमानित लागत, संभावित वित्तीय स्रोत और समयबद्ध दायित्व का उल्लेख अनिवार्य किया जा सकता है। केंद्र और राज्यों में स्वतंत्र राजकोषीय आकलन इस जानकारी को अधिक विश्वसनीय बना सकता है। इससे मतदाता यह समझ सकेगा कि किसी वादे का वास्तविक खर्च कितना है और उसके लिए अतिरिक्त आय आएगी या किसी दूसरे मद में कटौती करनी पड़ेगी। उद्देश्य किसी राजनीतिक दल के वादे को रोकना नहीं, बल्कि नागरिकों को स्पष्ट जानकारी देना होना चाहिए।

कल्याणकारी योजनाओं का मूल्यांकन केवल खर्च से नहीं, परिणाम से होना चाहिए। कितने बच्चों की शिक्षा बेहतर हुई, कितने परिवार स्वास्थ्य जोखिम से बाहर आए, कितनों को रोजगार मिला, कितने किसानों की उत्पादकता बढ़ी- ऐसे मापदंड योजनाओं की उपयोगिता बताएंगे। जो सहायता व्यक्ति को संकट से निकालकर अवसर तक पहुंचाती है, वह सामाजिक निवेश है, जो केवल तत्काल राजनीतिक आकर्षण पैदा करती है और भविष्य की वित्तीय क्षमता को कमजोर करती है, उसके औचित्य पर सार्वजनिक बहस होनी चाहिए।

लोक कल्याण का अर्थ यह नहीं कि राज्य हर जरूरत का स्थायी पालक बन जाए। चुनावी वादों की कसौटी भी यही होनी चाहिए कि वे नागरिक को अधिकार और अवसर दे रहे हैं या तत्काल लाभ का आकर्षण पैदा कर रहे हैं। भारत को ऐसी व्यवस्था चाहिए, जिसमें भोजन, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा जैसी बुनियादी जरूरतें राज्य की जिम्मेदारी बनी रहें, लेकिन हर नई योजना के साथ उसकी लागत, लक्ष्य और परिणाम भी स्पष्ट हों। लोकतंत्र में जनता को राहत का अधिकार है, पर उसे यह जानने का अधिकार भी है कि उस राहत की कीमत कौन चुका रहा है। किसी भी राज्य की सफलता इसी में है कि वह नागरिक को सहायता का पात्र भर न बनाए, बल्कि उसके लिए सम्मान, क्षमता और अवसर का निर्माण करे।

जीवन का मंच

महिमा सामंत

मनुष्य को समझना शायद संसार के सबसे कठिन कार्यों में से एक है। हम किसी व्यक्ति से मिलते हैं, उसके कुछ व्यवहार देखते हैं और उसके बारे में एक राय बना लेते हैं। मगर समय के साथ जब उसी व्यक्ति को अलग-अलग रिश्तों और परिस्थितियों में देखते हैं, तो अक्सर आश्चर्य होता है। जो व्यक्ति कहीं अत्यंत स्नेही दिखाई देता है, वही कहीं कठोर नजर आता है। जो किसी के लिए त्याग और समर्पण की मिसाल है, वही किसी दूसरे रिश्ते में उतना उदार नहीं दिखता। तब मन में प्रश्न उठता है- क्या व्यक्ति बदल जाता है, या रिश्तों के साथ उसका व्यवहार बदल जाता है?

सच तो यह है कि जीवन एक मंच की तरह है, जहां हर व्यक्ति अनेक भूमिकाएं निभाता है। वह एक साथ पुत्र भी है, पिता भी, मित्र भी, पति भी, कर्मचारी भी और नागरिक भी। हर भूमिका की अपनी अपेक्षाएं, सीमाएं और जिम्मेदारियां होती हैं। इसलिए व्यवहार में अंतर दिखाई देना स्वाभाविक है। समस्या तब शुरू होती है, जब हम इस अंतर को समझे बिना व्यक्ति के पूरे चरित्र का निर्णय कर लेते हैं। अपने बच्चे के लिए एक मां का प्रेम लगभग निस्वार्थ होता है। वह उसकी गलतियों को सुधारने का प्रयास करती है, लेकिन उसके प्रति उसके मन में अपनापन कम नहीं होता। वही महिला अपने पति के साथ जीवन की साझेदार होती है। वहां प्रेम के साथ मतभेद भी होते हैं, जिम्मेदारियां भी होती हैं और अनेक व्यावहारिक निर्णय भी। अपने सास-ससुर के सामने वह बहू होती है, जहां संबंधों के साथ अपेक्षाएं और सामाजिक मर्यादाएं जुड़ी होती हैं। अपने माता-पिता के घर में वह फिर बेटी बन जाती है, जहां बिना किसी संकोच के अपने मन की बात कह सकती है। अपनी सहेलियों के बीच वही महिला सबसे अधिक खुली, हंसमुख और निश्चिंत दिख सकती है। रिश्तों के मुताबिक उसकी अभिव्यक्ति भी बदल रही है।

इसी तरह एक व्यक्ति अपनी मां के सामने आज भी बच्चा बना रहता है। वही अपने बच्चों के सामने जिम्मेदार अभिभावक होता है। अपनी बहन के प्रति उसका व्यवहार सुरक्षात्मक हो सकता है, अपने भाई के प्रति प्रतिस्पर्धी और मित्रवत तथा अपने जीवनसाथी के प्रति सहयोग और साझेदारी वाला। हर रिश्ते में भावनाओं का रंग अलग होता है, इसलिए व्यवहार का स्वरूप भी बदल जाता है। कई बार सास अपनी बेटी और बहू के प्रति अलग व्यवहार करती हुई दिखाई देती है। बाहर से देखने पर यह जानबूझ कर किया गया भेदभाव लगता है। कुछ मामलों में ऐसा होता भी है, लेकिन हर बार नहीं। अनेक बार इसके पीछे वर्षों से बनी मानसिकता, भावनात्मक निकटता और सामाजिक संस्कार काम करते हैं। अपनी बेटी की गलती में उसे बचपन दिखाई देता है, जबकि बहू की वही गलती उसे जिम्मेदारी की कमी लग सकती है। दूसरी ओर, बहू अपनी मां की सलाह को स्नेह समझती है, लेकिन सास की सलाह को आलोचना मान बैठती है। दोनों पक्षों में अक्सर बुरी नीयत नहीं होती। समस्या दृष्टिकोण और मानसिकता की होती है।

इसी तरह, एक पिता अपनी बेटी के लिए अत्यधिक चिंतित रहता है, लेकिन वही चिंता बहू के लिए उतनी स्पष्ट रूप से व्यक्त नहीं कर पाता। एक व्यक्ति अपने मित्र की सफलता पर खुश होता है, लेकिन अपने भाई की सफलता पर तुलना करने लगता है। एक कर्मचारी अपने वरिष्ठ अधिकारी के प्रति औपचारिक रहता है, लेकिन कनिष्ठ सहयोगियों के साथ सहज। इन सबके पीछे कोई सोची-समझी योजना नहीं होती। अधिकांश मामलों में यह वर्षों से बने अनुभवों, भावनात्मक जुड़ाव और मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों का परिणाम होता है।

दरअसल, हर बदलता व्यवहार दिखावा नहीं होता। हम अक्सर कहते हैं कि फलां व्यक्ति के कई चेहरे हैं, लेकिन कई बार उसके कई चेहरे नहीं होते, बल्कि कई जिम्मेदारियां होती हैं। एक व्यक्ति अलग-अलग परिस्थितियों में अलग प्रकार की प्रतिक्रिया देता है, क्योंकि हर परिस्थिति उससे अलग भूमिका निभाने की अपेक्षा करती है। असली प्रश्न यह नहीं है कि उसका व्यवहार क्यों बदलता है, असली प्रश्न यह है कि क्या उसके मूल मूल्य भी बदल जाते हैं?

किसी व्यक्ति को केवल एक रिश्ते के आधार पर नहीं परखना चाहिए। जो शिक्षक कक्षा में कठोर लगता है, वही घर में अत्यंत स्नेही पिता हो सकता है। जो छात्र कक्षा में शांत है, वही मित्रों के बीच सबसे अधिक जीवंत हो सकता है। जो पड़ोसी कम बोलता है, वह अपने परिवार के लिए सबसे अधिक समर्पित व्यक्ति हो सकता है। हम अक्सर किसी व्यक्ति का केवल एक पक्ष देखते हैं और उसी के आधार पर उसके पूरे व्यक्तित्व का निर्णय कर लेते हैं। यह वैसा ही है, जैसे किसी विशाल वृक्ष की केवल एक शाखा देखकर उसके पूरे आकार का अनुमान लगाने का प्रयास करना।

आज के सोशल मीडिया युग में यह प्रवृत्ति और भी बढ़ गई है। कुछ तस्वीरें, कुछ पोस्ट या कुछ मिनटों की बातचीत देखकर हम लोगों के बारे में निष्कर्ष निकाल लेते हैं। जबकि वास्तविकता यह है कि हर व्यक्ति के जीवन में ऐसे अनेक पक्ष होते हैं, जिन्हें दुनिया कभी देख ही नहीं पाती। मुस्कुराते चेहरे के पीछे संघर्ष हो सकते हैं और कठोर दिखने वाले व्यक्तित्व के भीतर गहरी संवेदनशीलता छिपी हो सकती है।

फिर भी व्यवहार में परिवर्तन की एक सीमा होनी चाहिए। रिश्तों के अनुसार अभिव्यक्ति बदल सकती है, लेकिन सम्मान, करुणा, न्याय और संवेदनशीलता जैसे मूल्य नहीं बदलने चाहिए। शायद किसी व्यक्ति के चरित्र की सबसे बड़ी परीक्षा यही है कि वह उन लोगों के साथ कैसा व्यवहार करता है जिनसे उसे कोई लाभ नहीं मिलने वाला। अपने लोगों से प्रेम करना सहज है, लेकिन हर व्यक्ति के सम्मान को स्वीकार करना परिपक्वता का परिचायक है।

दुनिया मेरे आगे

> **जीवन एक मंच की तरह है, जहां हर व्यक्ति अनेक भूमिकाएं निभाता है। वह एक साथ पुत्र भी है, पिता भी, मित्र भी, पति भी, कर्मचारी भी और नागरिक भी। हर भूमिका की अपनी अपेक्षाएं, सीमाएं और जिम्मेदारियां होती हैं। इसलिए व्यवहार में अंतर दिखाई देना स्वाभाविक है।**

सम्मान के हकदार



'उपेक्षित बुजुर्ग' (दुनिया मेरे आगे, 6 अक्तूबर) पढ़ा। भारत में युवाओं की बड़ी आबादी देश के लिए अवसर है, तो बढ़ती बुजुर्ग आबादी हमारे सामाजिक दायित्व की याद दिलाती है। बुजुर्गों की संख्या बढ़ना इस बात का संकेत भी है कि जीवन प्रत्याशा बढ़ रही है। उनके अनुभव और जीवन-ज्ञान समाज के लिए अनमोल पूंजी हैं। लेकिन विडंबना है कि जिन माता-पिता ने बच्चों का भविष्य संवारने में अपना जीवन लगा दिया, वही बुढ़ापे में अकेलेपन और उपेक्षा का सामना कर रहे हैं। बदलते पारिवारिक ढांचे और रोजगार के लिए बढ़ते पलायन ने इस समस्या को और गंभीर बनाया है। केवल आर्थिक सहायता से बुजुर्गों की पीड़ा दूर नहीं होगी, उन्हें अपनापन, सम्मान और नियमित साथ चाहिए। युवाओं को समझना होगा कि माता-पिता की देखभाल कोई एहसान नहीं, बल्कि उनका नैतिक दायित्व है। सरकार को भी बुजुर्गों के लिए ऐसी योजनाएं बनानी चाहिए, जिनसे उन्हें आर्थिक सुरक्षा के साथ सम्मानजनक और आत्मनिर्भर जीवन मिल सके। समाज की प्रगति तभी सार्थक होगी, जब उसकी सबसे अनुभवी पीढ़ी सम्मान और सुरक्षा के साथ जी सके।

- *एमएम राजावत राज, शाजापुर, मप्र*

आंदोलन की राह

'संवाद के बजाय' (संपादकीय, 6 अक्तूबर) पढ़ा। युवाओं में बढ़ता असंतोष किसी एक दिन की उपज नहीं है। बेरोजगारी, सीमित अवसर, महंगी शिक्षा और शैक्षणिक संस्थानों की समस्याएं लंबे समय से उन्हें परेशान कर रही हैं। ऐसे में युवा अगर अपनी जायज मांगों को लेकर लोकतांत्रिक और शांतिपूर्ण तरीके से आवाज उठाते हैं, तो इसे अराजकता के बजाय व्यवस्था के प्रति उनकी बेचैनी और लोकतांत्रिक भागीदारी के रूप में देखा जाना चाहिए। इतिहास गवाह है कि युवा आंदोलनों ने समय-समय पर बदलाव की जमीन तैयार की है। सरकार को भी आंदोलनकारियों को संदेह की नजर से देखने के बजाय उनके असंतोष के कारणों को समझना चाहिए। केवल आश्वासन और योजनाओं की घोषणा से समस्या का समाधान नहीं होगा, उनका प्रभावी क्रियान्वयन भी जरूरी है। रोजगार के पर्याप्त अवसर, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा और समस्याओं पर सार्थक संवाद के अभाव में युवाओं का असंतोष बढ़ना स्वाभाविक है।

- *वेद प्रकाश, गुरुग्राम*

सजगता ही बचाव

बच्चों में मौसम बदलने पर बुखार और सर्दी-जुकाम को सामान्य मानकर अक्सर अभिभावक कुछ दिन इंतजार करते हैं। लेकिन लगातार बना रहने वाला तेज बुखार यदि आंखों का लाल होना, होंठों का फटना, जीभ में बदलाव, शरीर पर चकत्ते तथा हाथ-पैरों में लालिमा या सूजन जैसे लक्षणों के साथ हो तो इसे नजरअंदाज नहीं करना चाहिए। कावासाकी रोग दुर्लभ जरूर है, लेकिन समय पर पहचान और उपचार न मिलने पर हृदय की कोरोनरी रक्त वाहिनियों को नुकसान पहुंचा सकता है। यही इसकी सबसे गंभीर जटिलता है। इसलिए लंबे समय तक बुखार रहने पर अभिभावकों को स्वयं बीमारी का अनुमान लगाने के बजाय बाल रोग विशेषज्ञ से परामर्श लेना चाहिए। चिकित्सीय जांच और जरूरत के अनुसार त्वचा परीक्षण तथा हृदय की जांच से स्थिति स्पष्ट हो सकती है। बीमारी का कारण पूरी तरह स्पष्ट नहीं है और यह संक्रामक भी नहीं मानी जाती। बच्चों के स्वास्थ्य के प्रति सजगता बचाव के लिए महत्त्वपूर्ण है।

- *कांतिलाल मांडोत, लखनऊ*

निवेशकों की फिक्र

शेयर बाजार में लगातार गिरावट छोटे निवेशकों के लिए सबसे बड़ा डर बन जाती है। जीवनभर की बचत का मूल्य कुछ ही दिनों में घटता देखकर उनका बाजार से भरोसा उठने लगता है और वे इसे निवेश के बजाय जुए का मैदान समझने लगते हैं। ऐसे में सवाल है कि निवेशकों का भरोसा कैसे कायम रहे? यह समझना होगा कि बाजार में उतार-चढ़ाव स्वाभाविक है और निवेश का लक्ष्य एक दिन का मुनाफा नहीं, बल्कि लंबी अवधि की संपत्ति बनाना होना चाहिए। म्यूचुअल फंड जैसे अपेक्षाकृत अनुशासित विकल्पों के प्रति जागरूकता बढ़ानी होगी। भ्रामक खबरों, अंदरूनी कारोबार और कृत्रिम तरीके से शेयरों के भाव प्रभावित करने वालों पर सेबी को सख्ती दिखानी चाहिए। कंपनियों की वित्तीय स्थिति भी आसान भाषा में सार्वजनिक हो। शिकायत निवारण तंत्र तेज और भरोसेमंद बने। बाजार का भरोसा बढ़ते भावों से नहीं, पारदर्शिता से बनता है।

- *राजेंद्र कुमावत, जयपुर*

www.jagran.com राष्ट्रीय संस्करण
दैनिक जागरण
सोमवार, 12 अक्टूबर, 2026

दैनिक जागरण
जो चीजें कष्ट पहुंचाती हैं, वही सिखाती हैं

आंदोलन वही, जो भरोसा पैदा करे



डा. रामानंद शर्मा

केवल मुद्दा सही होना ही पर्याप्त नहीं है, उसके खिलाफ सही नेतृत्व, सही भाषा और सही पद्धति भी चाहिए



अवधेश राजपूत

लोकतंत्र की मूल शक्ति नागरिक के सवाल पूछने के अधिकार में निहित है। लोगों को अपनी समस्याओं तथा प्रशासनिक विफलताओं के विरुद्ध आवाज उठाने का पूर्ण लोकतांत्रिक अधिकार प्राप्त है। सरकार से सवाल पूछना किसी भी स्थिति में लोकतंत्र विरोधी कदम नहीं कहा जा सकता। असंतोष की प्राथमिक अभिव्यक्ति या स्वाभाविक विरोध-प्रदर्शनों को खारिज करना न तो प्रशासनिक दृष्टि से उचित है और न ही लोकतांत्रिक मूल्यों के अनुकूल, परंतु आज का सबसे विचारणीय प्रश्न असंतोष की उपस्थिति पर नहीं है। सवाल यह नहीं है कि युवाओं समेत देश के अन्य लोग अपनी चिंताओं को लेकर सड़कों पर क्यों उद्वेलित हैं। सवाल यह है कि उस आक्रोश और असंतोष की दिशा कौन तय कर रहा है? क्या वे अपने प्रामाणिक मुद्दों पर स्वयं मुखर हैं या उनके कंधों का इस्तेमाल किसी दलीय संघर्ष के लिए किया जा रहा है। यदि कोई आंदोलन दिशाहीन आक्रोश या परोक्ष राजनीतिक एजेंडे की भेंट चढ़ जाए, तो इसकी भरपाई पूरे समाज और राष्ट्र को चुकानी पड़ती है।

किसी भी आंदोलन की साख उसी प्रश्न से बनी रहती है, जिससे उसका जन्म हुआ था। जब आंदोलन की पहचान और प्राथमिकताएं बदलती हैं, तो उसका मूल उद्देश्य भी समाप्त हो जाता है। हालिया आंदोलनों में कुछ भटकाव दिखाई देता है। शुरुआत में मांगों की शृंखला स्वाभाविक और तार्किक थी। यह मूलतः एक सामाजिक और शैक्षणिक मांग थी, परंतु धीरे-धीरे यह बिगड़ी परीक्षा सुधारों के अपने मूल केंद्र से भटककर संवैधानिक संस्थाओं, निर्वाचन प्रक्रिया और दलीय आरोप-प्रत्यारोप का मंच बन गया। संवैधानिक संस्थाओं की कार्यप्रणाली पर स्वस्थ प्रश्न उठाना गलत नहीं है, पर जब परीक्षा सुधार के प्रश्नों से उपजा आंदोलन दलीय संस्थागत संघर्ष का रूप ले ले, तो उसे केवल स्वार्थत युवा आंदोलन कहना बौद्धिक ईमानदारी नहीं होगी। जब आंदोलन का लक्ष्य बदल जाता है, तो वास्तविक मुद्दे ठंडे बस्ते में चले जाते हैं। चुनावी राजनीति में सक्रिय दल सदैव ऐसे स्वाभाविक सामाजिक असंतोष की ताक में रहते हैं। वे आंदोलनों की मंच, मीडिया में दृश्यता और संसाधन दे सकते हैं, परंतु इस बाहरी सहयोग की कीमत आंदोलन को अपनी स्वायत्तता गंवाकर चुकानी पड़ती है।

इतिहास साक्षी है कि एक सफल जनांदोलन के लिए सही प्रश्न, नैतिक नेतृत्व, स्पष्ट भाषा, अहिंसक पद्धति, प्रामाणिक तथ्य, सुदृढ़ संगठन और नवनिर्माण का दीर्घकालिक उद्देश्य अनिवार्य शर्तें हैं। वर्ष 1974 का जेपी आंदोलन इन सिद्धांतों का सबसे प्रामाणिक ऐतिहासिक उदाहरण है। मार्च 1974 में बिहार छात्र संघर्ष समिति के युवा प्रतिनिधियों ने स्वयं लोकनायक जयप्रकाश नारायण से आंदोलन का मार्गदर्शक बनने का विनम्र आग्रह किया था। जेपी ने छात्रों का नेतृत्व स्वीकार करने से पहले यह स्पष्ट शर्त रखी थी कि आंदोलन पूरी तरह अहिंसक रहेगा, अनुशासित रहेगा और किसी दलीय स्वार्थ का शिकार नहीं बनेगा। जेपी ने छात्रों के असंतोष का उपयोग कभी अपने या किसी दल के तात्कालिक राजनीतिक लाभ के लिए नहीं किया। उनका नैतिक प्रभाव किसी सरकारी सत्ता से नहीं, बल्कि उनके सर्वोदय, त्याग और बौद्धिक निष्ठा से आता था। जेपी ने युवाओं के आक्रोश को एक उच्च नैतिक धरातल प्रदान किया। उन्होंने आंदोलन को केवल सरकार हटाने के संकीर्ण नारे से निकालकर संपूर्ण व्यवस्था परिवर्तन के रचनात्मक प्रश्न तक पहुंचाया। जब भी भीड़ के बीच उग्रता की संभावना बनी, तब जेपी ने लोगों को शांति और कठोर अनुशासन का संकल्प कराया। जनता ने भी उसका पूर्ण पालन किया।

आज की डिजिटल विरोध-संस्कृति और जेपी के आंदोलन मॉडल में एक बुनियादी अंतर दिखाई देता है। आज का तंत्र मुख्य रूप से इंटरनेट मीडिया की क्षणिक गोलबंदी, हैशटैग, वायरल वीडियो और त्वरित टकराव पर टिका हुआ है। इसके विपरीत जेपी का मॉडल जन-जागरण, निरंतर संवाद, विचार-विमर्श और अनुशासित संगठन पर आधारित था। केवल भीड़ जुटा लेना जनांदोलन नहीं होता। जन-जागरण से निकली हुई संगठित जनता ही वास्तविक जनांदोलन बनाती है। सड़क पर उतरने से पहले आंदोलन को जनता के सामने यह स्पष्ट करना होता है कि समस्या का वास्तविक स्वरूप क्या है, तथ्य क्या हैं, जिम्मेदारी किसकी है और समाधान का व्यावहारिक मार्ग क्या हो सकता है?

आज की राजनीति की एक बात साफ समझनी होगी कि छिटपुट प्रदर्शन और इंटरनेट मीडिया का शोर कभी व्यापक जनाधार नहीं बनते। जब आप समित घटनाओं के आधार पर पूरी व्यवस्था के ध्वस्त होने का ढोल पीटते हैं, तो आपसे सुबूत मांगे ही जाएंगे। 42 पूर्व न्यायाधीशों-अधिकारियों की चिट्ठी इसी मर्यादा की याद दिलाती है। बिना प्रमाण 'वोट चोरी' का हल्ला मचाना जनता का भरोसा तोड़ता है। मतदाता सूची के पुनरीक्षण यानी एसआइआर को भी इसी दृष्टि से देखना होगा। यह सूची को दुरुस्त करने का कानूनी काम है। पात्रों साक्ष्यों के गढ़े गए आरोप किसी लड़ाई को दलीय अखाड़े की कुश्ती बना देते हैं, जहां आंदोलन की साख ही हारती है।

आज का भारत 1974 के भारत से अलग है। आज के युवा के पास डिजिटल तकनीक, स्टार्टअप इकोसिस्टम, नवाचार और बुनियादी ढांचे के विकास के नए अवसर उपलब्ध हैं। इसलिए केवल सवाल खड़े करना ही पर्याप्त नहीं है, समाधान का हिस्सा बनना भी उतना ही आवश्यक है। देश को हमेशा आंदोलित रहने वालों की नहीं, बल्कि समस्याओं का व्यावहारिक समाधान खोजकर समाज और राष्ट्र के नवनिर्माण में निरंतर सक्रिय रहने वालों की आवश्यकता है। किसी आंदोलन की सबसे बड़ी सफलता यह नहीं है कि कितने लोग उसके साथ सड़क पर आए। उसकी सबसे बड़ी सफलता यह है कि उसके बाद कितने लोग समाज और राष्ट्र के निर्माण के लिए समर्पित होकर खड़े रहे। केवल मुद्दा सही होना ही पर्याप्त नहीं है, उसे सही नेतृत्व, सही भाषा, सही पद्धति भी चाहिए। यही लोकनायक जेपी की विरासत है और यही आज की राजनीति का वास्तविक मार्ग है।

(लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के आर्यभट्ट कालेज में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं)
response@jagran.com

दोहरे रवैये पर प्रहार

काकरोच जनता पार्टी की ओर से दिल्ली में बिना अनुमति के किए गए धरना-प्रदर्शन पर पुलिस की आक्रामक कार्रवाई को लेकर संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार कार्यालय ने जो चिंता जताई, उसका कहीं कोई मूल्य नहीं। इस संगठन की चिंताओं को खारिज करना आवश्यक था। यह अच्छा हुआ कि भारत ने दो टूक ढंग से ऐसा किया और साथ ही उसे नसीहत भी दी कि वह अपने दोहरे रवैये का परित्याग करे। इस संगठन ने जिस तरह कानून एवं व्यवस्था बनाए रखने के लिए पुलिस कार्रवाई पर अपनी चिंता जताई, उससे यही पता चलता है कि वह भारत सरीखे विश्व के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश के प्रति किस तरह दुराग्रहपूर्ण रवैया अपनाए हुए है। समस्या केवल इतनी ही नहीं है। समस्या यह भी है कि वह कहीं अधिक गंभीर घटनाओं और साथ ही मानवाधिकारों के निर्मम उल्लंघन पर चुप्पी साधना पसंद करता है। बतौर उदाहरण पाकिस्तान के कब्जे वाले जम्मू-कश्मीर में एक लंबे अर्से से लोगों का बर्बरतापूर्वक दमन और उत्पीड़न किया जा रहा है। वह तब है जब वे अपने वैध अधिकारों की मांग कर रहे हैं। यह मांग करने वालों पर बेरहमी से गोलियां चलाई गई हैं, जिसमें अनेक लोग मारे गए हैं। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार कार्यालय पाकिस्तान में हो बलूचिस्तान में घट रही घटनाओं पर भी मौन साधे है। इसी तरह वह तीन साल से अधिक जेल में बंद और वहां बुनियादी सुविधाओं से वंचित इमरान खान के मामले में भी कुछ कहने को जरूरत नहीं समझ रहा है। बात केवल पाकिस्तान की ही नहीं है। इस संगठन को यूरोपीय देशों में प्रदर्शनकारियों के विरुद्ध पुलिस की कहीं अधिक सख्त कार्रवाई में भी कुछ आपत्तिजनक नहीं दिखाई देता। वह भी समझना कठिन है कि अमेरिका एवं यूरोप में वैध तरीके से रह रहे अप्रवासियों के खिलाफ नफरत का जो माहौल बनाया जा रहा है, उस पर भी वह संगठन चिंता जताने के लिए तैयार नहीं। अभी हाल में फ्रांस में बड़े पैमाने पर हिंसा हुई और स्कूलों तक को जला दिया गया, लेकिन उसने कुछ भी नहीं कहा।

ऐसा लगता है कि इस संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार कार्यालय के कर्ताधर्ता ने यह देखने-समझने की भी जरूरत नहीं समझी कि भारत के जिस प्रकरण को लेकर उसने जो चिंता जताई, उसके मूल में क्या है। उसे इतनी जानकारी होनी ही चाहिए कि संवैधानिक संस्था चुनाव आयोग मतदाता सूचियों के शुद्धीकरण को एक व्यापक प्रक्रिया चला रही है, जिसके खिलाफ सड़कों पर उतरे वाले लोग दुष्प्रचार अभियान छेड़े हुए हैं। तथ्य यह भी है कि इस प्रक्रिया की सुनवाई सुप्रीम कोर्ट कर रहा है। इस संगठन ने यह भी ओझल कर दिया कि चुनाव आयोग की प्रक्रिया को किस तरह बड़ी संख्या में भारत के पूर्व नौकरशाह एवं न्यायाधीश आवश्यक एवं उचित बताने में लगे हुए हैं।

आतंकी षड्यंत्र बड़ी चुनौती

अमृतसर में पुलिस की ओर से चार तस्करों की गिरफ्तारी और उनके कब्जे से अमेरिका निर्मित एम-16 जैसी घातक राइफल, नौ विदेशी पिस्तौल व 15 किलो अफीम बरामद होना चिंता का विषय है। यह घटना दर्शाती है कि सीमा पार बैठे देशविरोधी तत्व पंजाब को अशांत करने के लिए किस हद तक षड्यंत्र रच रहे हैं। खासकर पहली बार सीमा पार से एम-16 जैसी अत्याधुनिक राइफल का भेजा जाना सुरक्षा एजेंसियों के लिए निश्चित रूप से गंभीर चिंता का विषय है। छह सौ मीटर तक मारक क्षमता रखने वाले ऐसे हथियार असामाजिक तत्वों और गैंगस्टरों के हाथों में पहुंचना आंतरिक सुरक्षा के लिए बड़ा खतरा साबित हो सकता है। विगत चार माह से हालांकि पुलिस ने भारी मात्रा में हथियार बरामद कर यह दिखाया है कि सुरक्षा तंत्र मुस्तैद है, परंतु जिस प्रकार से त्योहारी सत्र की शुरुआत पर हथियारों की खेप पकड़ी गई, उसे देखते हुए इससे इन्कार नहीं किया जा सकता है कि प्रदेश में माहौल बिगाड़ने की साजिशें भी तेज हो गई हैं। समय रहते इन नापाक मंसूबों को नाकाम करने के लिए पुलिस और खुफिया एजेंसियों को आपसी समन्वय को और मजबूत करना होगा, ताकि किसी भी अप्रिय घटना को रोका जा सके। पंजाब एक सीमावर्ती राज्य है। पाकिस्तान से लगती इसकी सीमा की सख्त निगरानी देश की सुरक्षा के लिए बहुत जरूरी है।

> पहली बार सीमा पार से एम-16 जैसी अत्याधुनिक राइफल का भेजा जाना निश्चित रूप से गंभीर चिंता का विषय है

आर्थिकी को नई धार देने की कोशिश

हाल में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण की अध्यक्षता में आयोजित 57वीं वस्तु एवं सेवा कर (जीएसटी) परिषद की बैठक में जीएसटी को सरल एवं बेहतर बनाने के लिए बड़े बदलाव किए। ये बदलाव करीब एक साल पहले जीएसटी दरों और स्लैब को कम करने के लिए गए उठाए गए महत्वपूर्ण कदमों के बाद अब जीएसटी व्यवस्था में सुधार को नई धार देते हुए दिखाई दे रहे हैं। जीएसटी परिषद के नए फैसले पेंशनकर, टैक्स रिटर्न, रिफंड, इनपुट टैक्स क्रेडिट (आइटीसी), कर प्रवर्तन, निर्यात, विवाद निपटान और विभिन्न प्रदेशों के बीच वस्तुओं की आवाजाही से जुड़े नियमों को सरल और लाभप्रद बनाने से संबंधित हैं। वस्तुतः यह पूरी कवायद, व्यापार सुगमता (ईज आफ डूइंग बिजनेस) और कर अनुपालन के सरलीकरण पर केंद्रित है।

उल्लेखनीय है कि जीएसटी परिषद ने कर अधिकारियों की गिरफ्तारी की शक्तियों को समाप्त करने और अभियोजन की सीमा को बढ़ाए जाने की ऐतिहासिक सिफारिश की है। इससे 'कर आतंक' का डर खत्म होगा और ईमानदारी से व्यापार करने वालों का भरोसा बढ़ेगा। परिषद ने आइटीसी और रिफंड की प्रक्रियाओं को बेहद तेज और पारदर्शी बनाने का निर्णय लिया है। इससे व्यवसायों के पास नकदी का प्रवाह बढ़ेगा, जिससे वे नया निवेश कर सकेंगे। कुल कर देनदारी 10,000 रुपये से कम होने पर जीएसटी के तहत कारण बताओ नोटिस नहीं दिए जाने, सामान्य जुर्माने की सीमा घटाए जाने और भारतीय कंपनियों के विदेशी कारोबार को कुछ शर्तों के साथ निर्यात माने जाने संबंधी सिफारिशों से उद्योग-कारोबार के विकास का नया दौर शुरू होगा। खासतौर से छोटे और असंगठित विक्रेताओं को ई-कामर्स प्लेटफार्म के वेयरहाउस का उपयोग कर व्यापार करने की अनुमति मिलने से डिजिटल अर्थव्यवस्था को बढ़ावा मिलेगा। प्रधानमंत्री मोदी के अनुसार इन बदलावों से निर्णय लेने की प्रक्रिया तेज होगी, अनुपालन लागत में कमी आएगी और करदाताओं को आटोमेटेड रिफंड की सुविधा मिलेगी। इन नए जीएसटी सुधारों से जहां जीएसटी संबंधी मुश्किलों का सामना कर रहे एमएसएमई,



जीएसटी में हालिया सुधार से कारोबारियों में डर खत्म होगा और ईमानदारी से व्यापार करने वालों का भरोसा बढ़ेगा

उ. नरतीनगाल गंजाही



सरलहोती जीएसटी व्यवस्था। फाइल

स्टार्टअप्स और छोटे व्यापारियों को बड़ा लाभ होगा, वहीं कच्चे तेल की ऊंची कीमतों, वैश्विक आपूर्ति शृंखला में व्यवधान, महंगाई और कमजोर मानसून जैसी चुनौतियों का सामना कर रही भारतीय अर्थव्यवस्था को भी रफ्तार पकड़ने में मदद मिलेगी।

वित्त मंत्रालय ने सितंबर 2026 की अपनी मासिक आर्थिक समीक्षा में कहा है कि कच्चे तेल की बढ़ती कीमतें, वैश्विक वित्तीय अस्थिरता, अमेरिकी व्यापार नीतियों से जुड़ी अनिश्चितताएं, महंगाई और देश में कमजोर मानसून से निर्मित परिस्थितियां इस समय देश की आर्थिक वृद्धि की गति को बनाए रखने में बड़ी चुनौती बन गई हैं। हालांकि आरबीआइ द्वारा प्रकाशित बुलेटिन 'स्टेट आफ द इकोनमी' के अनुसार इन सबके बावजूद मजबूत घरेलू बुनियाद के दम पर देश की अर्थव्यवस्था दमदार बनी हुई है। इस परिदृश्य के कारण भारत की अर्थव्यवस्था चालू वित्त वर्ष 2026-27 की दूसरी तिमाही यानी जुलाई से सितंबर में 7.3 प्रतिशत की वृद्धि दर हासिल कर सकती है, जबकि पहली तिमाही में भारत ने 7.8 प्रतिशत की मजबूत वृद्धि दर्ज की थी। पश्चिम एशिया में बढ़ते भू-राजनीतिक तनाव और वैश्विक सुस्ती के बावजूद भारतीय अर्थव्यवस्था में लचीलापन देखने को मिला है। विश्व बैंक की नई रिपोर्ट में चालू वित्त वर्ष के लिए भारत की विकास दर के पूर्व निर्धारित अनुमान 6.6 प्रतिशत को बढ़ाकर 7.1 प्रतिशत कर दिया गया है। भारत की जीडीपी वृद्धि अनुमान में बढ़ोतरी का मुख्य आधार मजबूत घरेलू मांग, निजी खपत में लगातार सुधार और बुनियादी ढांचा क्षेत्र में सरकारी एवं निजी निवेश में आई तेजी है। इसी कारण क्रेडिट रेटिंग एजेंसी मूडीज ने भारत की सावरेन क्रेडिट रेटिंग को 'बीएए 3' पर बनाए रखा है और देश के आर्थिक आउटलुक को 'स्थिर' रखा है। दुनिया की प्रसिद्ध जापानी क्रेडिट रेटिंग एजेंसी ने भारत की सावरेन रेटिंग को भी बीबीबी+ से बढ़ाकर ए- कर दिया है। यह भारत की मजबूत आर्थिक वृद्धि, ठोस निजी खपत, निरंतर सार्वजनिक निवेश और सुदृढ़ होती वित्तीय व्यवस्था के कारण संभव हुआ है। यद्यपि विकास की गति सकारात्मक है, लेकिन भविष्य की चुनौतियों को और भी ध्यान दिया जाना जरूरी है। भारत को वैश्विक और घरेलू आर्थिक चुनौतियों का रणनीतिपूर्वक सामना करते हुए आगे बढ़ना होगा।

निःसंदेह देश की आर्थिक रफ्तार बनाए रखने और जीएसटी व्यवस्था को और अधिक कारगर बनाने के लिए कई और बातों पर ध्यान देना जरूरी है। जैसे कि जीएसटी विभाग में व्याप्त भ्रष्टाचार नियंत्रित करना होगा। आपूर्तिकर्ता द्वारा कर जमा न करने पर ईमानदार खरीदारों के कर जमा (इनपुट टैक्स क्रेडिट) को रोके जाने से बचाने के लिए कड़े कानूनी सुरक्षा नियम लागू करने होंगे। एमएसएमई और निर्यातकों के लिए कर वापसी प्रक्रिया को शत-प्रतिशत स्वचालित और जोखिम-आधारित बनाकर व्यावसायिक पूंजी का प्रवाह तेज करना होगा। करदाताओं और अधिकारियों के बीच सीधे संपर्क को समाप्त करने वाली कर-अधिनिर्णयन प्रणाली को सभी राज्यों में पूरी तरह लागू करना होगा।

(लेखक अर्थशास्त्री हैं)
response@jagran.com



शून्य साधना

मनुष्य का मन विचारों का अनवरत प्रवाह है। इच्छाएं, स्मृतियां, कल्पनाएं और आशंकाएं उसे निरंतर व्यस्त रखती हैं। इस मानसिक हलचल के बीच वह बाहरी संसार को तो समझने का प्रयास करता है, लेकिन अपने भीतर झांकने का अवसर खो देता है। योग साधना जहां शरीर, मन और आत्मा के बीच सामंजस्य स्थापित करने का मार्ग है, वहीं शून्य साधना मानसिक विचलन को शांत कर अंतर्मन की गहराइयों तक पहुंचने का अभ्यास है। शून्य का अर्थ अस्तित्वहीनता नहीं, बल्कि विचारों के अनावश्यक शोर से मुक्त होकर सहज जागरूकता में स्थित होना है। जब मन अतीत की स्मृतियों और भविष्य की आशंकाओं से मुक्त होकर वर्तमान में ठहरता है, तब एक ऐसी आंतरिक शांति का अनुभव होता है, जिसमें समय और स्थान का बोध भी क्षीण पड़ने लगता है। यह अवस्था किसी विचार को बलपूर्वक रोकने से नहीं, बल्कि विचारों के प्रति अनासक्त दृष्टि विकसित करने से आती है। शून्य साधना के लिए शांत स्थान पर बैठें। आंखें बंद या अर्धखुली रखें और अपना ध्यान श्वास पर केंद्रित करें। सांसों के आने-जाने को महसूस करें। मन में विचार उठें तो उनसे संघर्ष न करें और न ही उनके पीछे चलें। उन्हें आते-जाते देखते हुए धीरे-धीरे मन को स्थिर होने दें। नियमित अभ्यास से मन की चंचलता कम करने और एकाग्रता विकसित करने में सहायता मिल सकती है।

जब मन का शोर कम होता है, तब आत्मचिंतन और विवेक के लिए स्थान बनता है। इसी मौन में व्यक्ति अपने विचारों, इच्छाओं और व्यवहार को स्पष्टता से समझ सकता है। शून्य साधना का सार स्वयं को मिटाना नहीं, अहंकार और अनावश्यक आसक्तियों के बोझ से मुक्त होना है। क्योंकि मनुष्य बाहर की दुनिया में बहुत कुछ प्राप्त करके भी भीतर से रिक्त रह सकता है। जिसने अपने भीतर उतर स्वयं को जान लिया, उसके लिए शून्य रिक्तता नहीं, आत्मबोध की पूर्णता बन जाता है।

एसएन दुबे 'स्नेही'

शक्तिस्वरूपा का सौम्य रूप भी प्रेरणादायी

डा. मोनिका शर्मा

बेटियां समग्र संसार की पालक मां भगवती से जीवन को साधने का पाठ भी पढ़ें

भारतीय परिवारों में बेटियों को शक्तिस्वरूपा मानकर पूजा जाता है। देवी भगवती का मान दिया जाता है। ईश्वरीय आस्था का यूं मानवीय धरातल पर जुड़ा होना सुखद है, पर बेटियों को मां शक्ति से जुड़े प्रेरणादायी पहलुओं को भी समझना चाहिए। मौजूदा दौर में मातृशक्ति के पूजन-अर्चन की सार्थकता यह भी है कि मां के पौराणिक चरित्र से बेटियां प्रेरणा लें। आस्था मन को साधने का काम है तो क्यों न बेटियां समग्र संसार की पालक मां भगवती से जीवन को साधने का पाठ भी पढ़ें। शक्तिसंपन्न होते हुए भी विनाश नहीं सृजन का मार्ग चुनने वाली माता आदिशक्ति से जुड़ी हर बात मन, जीवन, परिवार या समग्र परिवेश में आत्मशक्ति से बल पर सब कुछ सहेजना ही तो सिखाती है।

माता दुर्गा मातृशक्ति के रूप में पोषक की भूमिका में पूजनीय हैं। यही वजह है कि आदिशक्ति के हर रूप की गाथा और गुण भावनात्मक धरातल पर सशक्त बनने का पाठ पढ़ाते हैं। स्मरण रहे कि दिशाहीनता से बचने और अपने सम्मान स्वाभिमान की रक्षा के लिए मन की मजबूती ही सबसे अहम है। इसीलिए शक्तिस्वरूपा से सौम्यता का आशीष भी मांग जाए। ध्यान रहे कि संवेदनशीलता, सजग व्यक्तित्व और सूझबूझ भरी संग जीवन को संवारने का भाव सदा से ही भारतीय स्त्रियों की पहचान रहा है।

वस्तुतः भगवती का हर रूप भारतीय स्त्री दमकते चेहरे का प्रतीक है। मातृशक्ति के रूप में पोषक और चेतनामयी रूप में सजगता और जागरूकता का प्रतिबिंब। शक्तिसंपन्न होने बावजूद बिखरने-उजाड़ने का भाव दूर दूर तक नहीं। समग्र सृष्टि का विनाश करने की शक्ति रखने वाली भगवती का पालक के रूप में ममतामयी स्वरूप ही हमारे मन में बसा है। हालांकि दुष्टों के संहार हेतु काली का रूप धरने वाली देवी दुर्गा ने परिस्थिति के अनुसार भी कई रूप धरे हैं। ऐसे में आस्था का अर्थ यह भी है कि हर परिस्थिति में माता के विभिन्न रूपों से प्रेरणा लेकर अपनी ऊर्जा को सही दिशा में लगाने का मार्ग ढूंढ़ा जाए। मौजूदा दौर में प्रगतिशील होने के नाम पर स्वयं अपनी ही हानि करने वाली गतिविधियों में शामिल होने का भी चलन है। इसीलिए जागरूक और सजग रहना जरूरी है। आधुनिक होना मानवीय अनुभूतियों से दूर होना नहीं होता। याद रहे कि ज्ञान और विवेक की अधिष्ठात्री मां सरस्वती भी आदिशक्ति का ही एक रूप हैं। चेतनासंपन्न हो अपने दम पर जीने का भाव ही प्रगतिशील होना है। हर बदलाव में बेहतरी ढूंढ़ने का सोच ही आधुनिक होना है। बेटियों को समझना होगा कि सबल व्यक्तित्व के लिए समझ की पक्की बुनियाद आवश्यक है। ऐसे सधे सोच से ही निडर होकर चुनौतियों का सामना करने की शक्ति मिलती है।

(लेखिका स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

बेवजह का हो-हल्ला

'एक और आवश्यक पत्र' शीर्षक से प्रकाशित संपादकीय पढ़ा। एसआइआर पर बेवजह का हो-हल्ला हो रहा है, खासतौर पर कांग्रेस को इस मुद्दे पर इतना बवाल करने की जरूरत ही नहीं है, क्योंकि जवाहरलाल नेहरू जब प्रधानमंत्री थे तब भी यह प्रक्रिया हुई थी। बाद में आई इंदिरा गांधी, राजीव गांधी और नरसिंह राव की सरकारों के समय भी एसआइआर की प्रक्रियाएं हुईं हैं। राहुल गांधी से सवाल है कि देश आजाद होने के बाद वर्षों तक कांग्रेस जो जीतती रही, क्या वह भी चुनाव आयोग की मिलीभगत से हुआ? दूसरी चीज अगर किसी का नाम मतदाता सूची में गलत है या किसी के पिता या पति का नाम मेल नहीं खा रहा है या अगर कोई पुरुष है और मतदाता सूची में उसका लिंग बदला हुआ है या किसी महिला को पुल्लिंग दिखाया गया है या अगर किसी व्यक्ति की मृत्यु हो गई है, लेकिन फिर भी उसका नाम मतदाता सूची में है या कोई कहीं और जाकर रहने लगा है या किसी के दो मतदाता पहचान पत्र हैं तो क्या ऐसी चीजों में सुधार नहीं होना चाहिए? क्या यह सुधार मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण के जरिये करना गलत है? मतदाता सूचियों के विशेष गहन पुनरीक्षण पर जो राजनीति शुरू हो गई है, उससे साबित होता है कि कुछ लोग वोट बैंक की खातिर चुनाव प्रक्रिया में सुधार नहीं चाहते हैं। बिहार, बंगाल, झारखंड में जिस तरह मतदाता सूचियों में बांग्लादेश, नेपाल, म्यांमार के घुसपैठियों के नाम सामने आए हैं वह देश की सुरक्षा के लिए खतरे की घंटी है। देश की सुरक्षा और मतदान प्रक्रिया में सुधार लाने के इस मुद्दे पर राजनीति नहीं होनी चाहिए।

राजेश कुमार पीहल, जालंधर

ग्रामीण इलाकों में डिजिटल क्रांति

सूचना क्रांति के दौर में इंटरनेट बुनियादी आवश्यकता बन चुका है। इंटरनेट की पहुंच आसान होने से भारत ने डिजिटल भुगतान, आनलाइन शिक्षा और ई-गवर्नेंस के क्षेत्र में उल्लेखनीय विस्तार किया है। आज भी बुनियादी ढांचे के अभाव में सुदूर गांवों में इंटरनेट उपलब्ध नहीं है। एक तरफ भारत इंटरनेट खपत के मामले में दुनिया के अग्रणी देशों में शामिल है। वहीं दूसरी ओर ग्रामीण, पहाड़ी, सीमावर्ती और दूरदराज के अनेक क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण इंटरनेट कनेक्टिविटी की चुनौती बनी हुई है। यानी आज भी एक वर्ग इंटरनेट से पूरी तरह वंचित है। वंचित गांवों को इंटरनेट से जोड़े बिना 'डिजिटल इंडिया' सपना अधूरा ही है। ऐसे में सैटेलाइट इंटरनेट ग्रामीण भारत के लिए एक महत्वपूर्ण अवसर है। जिन क्षेत्रों में फाइबर केबल बिछान या मोबाइल टावर स्थापित करना कठिन अथवा महंगा है, वहां सैटेलाइट इंटरनेट का कदम मददगार साबित हो सकता है। इसके माध्यम से ग्रामीण इलाकों तक इंटरनेट पहुंचाया जा सकता है, जिससे शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और व्यापार जैसे क्षेत्रों में ग्रामीण आबादी दुनिया से जुड़ सकती है। ग्रामीण इलाकों में बड़ी संख्या में छात्र गुणवत्तापूर्ण शिक्षा से वंचित हैं। ऐसे छात्रों के लिए सैटेलाइट इंटरनेट के माध्यम से आनलाइन पाठ्यक्रमों, डिजिटल पुस्तकालयों और विशेषज्ञ शिक्षकों की कक्षाओं तक पहुंच उपलब्ध होना किसी वरदान से कम नहीं होगा। सरकार स्वास्थ्य केंद्रों को जिला अस्पतालों से जोड़कर मरीजों को प्रारंभिक परामर्श और विशेषज्ञ चिकित्सकों की राय उपलब्ध करवा रही है। ऐसे में जहां इंटरनेट ही उपलब्ध नहीं है, वहां इन सुविधाओं का लाभ कैसे पहुंच पाएगा? भारत सरकार को सुनिश्चित करना चाहिए कि सैटेलाइट कनेक्शन के लिए आवश्यक उपकरणों की कीमत और सेवा शुल्क कई ग्रामीण परिवारों की आर्थिक क्षमता से बाहर न हो। वहीं सैटेलाइट इंटरनेट कंपनियां डाटा सुरक्षा संबंधी आवश्यकताओं और लागू सुरक्षा मानकों का पालन करें जिससे उपयोगकर्ताओं की निजता की रक्षा और नेटवर्क की जवाबदेही भी तय हो।

महेश कुमार, सिद्धमुख (राजस्थान)

मेलबाक्स

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।

अपने पत्र इस पते पर भेजें:
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल: response@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, अई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली-110001 से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा-201309 से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण)-विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष: नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : (0120)-4615600, E-mail: delhi@nda.jagran.com. R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 * इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।

आजकल

स्वास्थ्य के अधिकार से बड़ा नहीं पेटेंट

बीमारी किसी की आर्थिक स्थिति देखकर नहीं आती, लेकिन इलाज का खर्च प्राय: मरीज की आर्थिक हैसियत देखकर उसका भविष्य तय करने लगता है। किसी परिवार में गंभीर बीमारी दस्तक देती है तो उसकी चिंता केवल मरीज के स्वास्थ्य तक सीमित नहीं रहती, बल्कि दवाओं के खर्च, जांच और अस्पताल के बिल तक की होती है। ऐसे में सवाल उठता है कि क्या जीवन रक्षक दवाएं आम आदमी की पहुंच में नहीं होनी चाहिए? दवाएं बुनियादी जरूरत हैं। इसलिए उनकी उपलब्धता और उचित कीमत सुनिश्चित करना प्राथमिक जिम्मेदारी होनी चाहिए


प्रतीकात्मक



विकास आसावत
पेटेंट मामलों के विशेषज्ञ

पिछले कुछ दशकों के दौरान देश में स्वास्थ्य सुविधाओं का विस्तार हुआ है। परंतु यह भी सही है कि नागरिक स्वास्थ्य पर होने वाले खर्च को कम करने में किफायती दामों पर दवाएं मिलना अब भी सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। यह चुनौती उन मरीजों के लिए अधिक है जिन्हें कैंसर, दुर्लभ बीमारियों व जानलेवा एवं आपातकालीन स्वास्थ्य स्थितियों के लिए लंबे समय तक उपचार की आवश्यकता होती है।

वस्तुत: भारत का फार्मास्युटिकल उद्योग अपने लंबे इतिहास, दवाओं तक किफायती पहुंच को प्राथमिकता देने और कोविड महामारी जैसे वैश्विक स्वास्थ्य संकटों के अनुकूल तेजी से ढलने की क्षमता के कारण "विश्व की फार्मेसी" के रूप में जाना जाता है। हमारे देश के सामाजिक-आर्थिक परिदृश्य को देखें तो दवा की कीमतों पर नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है। भारत अपनी पेटेंट नीति के कारण जेनेरिक दवाओं को प्रोत्साहन देने में सफल रहा है, जिसके कारण पेटेंट समाप्ति पर संबंधित दवा की उचित कीमत पर तत्काल उपलब्धता से मरीज व उनके परिजनों के लिए इलाज वहनीय हो जाता है।

बाजार में नई दवा लाना विश्व के सबसे जोखिम भरे और महंगे उपक्रमों में से एक है। हजारों केमिकल कंपाउंड की स्क्रीनिंग, लंबे समय का अनुसंधान, सुरक्षा और असर साबित करने के लिए मनुष्यों पर बड़े पैमाने पर और महंगे क्लिनिकल ट्रायल के बाद ही कोई नई दवा मानवीय प्रयोग के लिए उपलब्ध हो पाती है। मंजूरी पाने वाली हर एक दवा के लिए, हजारों दवाएं इस सफर में ही असफल हो जाती हैं और इतने धन व समय के निवेश के बाद भी मार्केट में लॉन्च नहीं हो पाती हैं। कंपनियों को इतना बड़ा आर्थिक जोखिम उठाने के लिए प्रोत्साहित करने के लिए, सरकारें इन्हें कुछ निश्चित समय (20 वर्ष) तक पेटेंट अधिकार देती हैं, ताकि उनके अनुसंधान और निवेश की भरपाई हो सके। पेटेंट एकाधिकार के समय में, पेटेंट होल्डर कंपनी या उसकी अधिकृत इकाई ही एकमात्र आपूर्तिकर्ता होती है। साधारणतया वह दवा उत्पाद की ऊंची कीमत तय करती है, ताकि सफल दवा के लिए किए गए भारी अनुसंधान निवेश के साथ-साथ अन्य असफल अनुसंधानों की भरपाई हो सके तथा भविष्य की नई दवाओं के अनुसंधान के लिए फंड रिजर्व किया जा सके।

ऐसे में एक महत्वपूर्ण सवाल सामने आता है कि क्या कोई पेटेंट अधिकार किसी आविष्कार की इस हद तक सुरक्षा दे सकता है कि जीवन रक्षक दवा उन लोगों तक ही न पहुंच पाए जिन्हें उसकी सबसे ज्यादा जरूरत है? दूसरा महत्वपूर्ण सवाल है कि क्या सरकार जीवन रक्षक दवाओं को सस्ता बनाने के लिए किसी निजी पेटेंट का इस्तेमाल कर सकती है? क्या जीवन रक्षक दवा का मूल्य कानूनी प्रश्न बन सकता है?

जहां तक सरकार के नियंत्रण की बात है, पेटेंट एक्ट की धारा 84 और 92 के तहत दवा की कीमत पहुंच से बाहर होने, राष्ट्रीय आपातकाल, सार्वजनिक गैर-व्यावसायिक उपयोग और महामारी जैसे स्वास्थ्य संकट के दौरान किसी तीसरे पक्ष को पेटेंट होल्डर की अनुमति के बिना ही पेटेंट का इस्तेमाल करने की इजाजत दी जाती है, जिससे दवा की आपूर्ति कम कीमत पर हो सके। वहीं धारा 100 केंद्र सरकार या उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति को सरकारी उद्देश्यों के लिए पेटेंट किए गए आविष्कार का उपयोग करने का अधिकार देती है। हाल ही में इससे संबंधित एक मामला करेल उच्च न्यायालय के सामने आया।

मामले की शुरुआत ब्रेस्ट कैंसर से जूझ रही एक महिला द्वारा 2022 में केरल हाई कोर्ट में याचिका दायर करने से होती है। उनकी एक गंभीर चिंता थी कि जब दवा का खर्च पहुंच से बाहर हो, तो मरीज अपना इलाज कैसे जारी रख सकता है? यह मामला ब्रेस्ट कैंसर के कुछ खास प्रकारों के इलाज में इस्तेमाल होने वाली एक पेटेंटेड दवा के मामले से जुड़ा है। याचिका के अनुसार दवा के 21 दिन के कोर्स की कीमत लगभग 58 हजार रुपये थी। बाद में याचिकाकर्ता का निधन हो गया। लेकिन उनकी मौत के साथ यह मामला खत्म नहीं हुआ। न्यायालय ने जनहित में इस मामले की सुनवाई जारी रखते हुए हाल ही में पेटेंट और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच के बीच संबंध पर एक महत्वपूर्ण निर्णय दिया है। अदालत ने कहा है कि पेटेंट एक्ट की धारा 100 के तहत केंद्र सरकार दवा के पेटेंट का इस्तेमाल कर दवा को बिना मुनाफे के जरूरतमंद मरीजों को उपलब्ध करा सकती है।

साथ ही कोर्ट ने केंद्र सरकार से पेटेंट वाली कैंसर की दवाओं की कीमत और आम लोगों की पहुंच के बारे में भी आकलन करने को कहा है। यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के अंतर्गत स्वास्थ्य के मौलिक अधिकार के लिए एक बड़ी जीत है। किफायती दवाएं केवल आर्थिक मुद्दा नहीं हैं, बल्कि वे मरीज-केंद्रित स्वास्थ्य सेवा का एक जरूरी हिस्सा हैं। हालांकि कोर्ट ने आविष्कारकों के हितों का भी ध्यान रखते हुए ऐसे इस्तेमाल को गैर-व्यावसायिक, जन-कल्याणकारी वितरण तक ही सीमित रखने और पेटेंट धारक को उचित रायल्टी का भुगतान करना जरूरी बताया। अर्थात इरादा केवल किसी दवा विशेष की कीमत कम करना नहीं होना चाहिए, बल्कि टिकाऊ और संभव ढांचा बनाना चाहिए जिसमें नवाचार, बौद्धिक संपदा की सुरक्षा और जरूरी एवं जीवन रक्षक दवाओं तक पहुंच, सभी साथ-साथ चल सकें। यह दिशानिर्देश सरकार के लिए उस स्थिति में एक पथप्रदर्शक बन सकता है, जब वह महंगी और जीवन रक्षक दवाओं तक पहुंच बेहतर बनाने के उपाय तलाश रही होगी।

सभी लोगों की आसान पहुंच में हों दवाएं

ज्योति रंजन पाठक

भारत दवा उत्पादन के क्षेत्र में दुनिया के प्रमुख देशों में शामिल है। इसके बावजूद बड़ी संख्या में मरीजों के लिए नियमित दवाएं खरीदना चुनौती बना हुआ है। मधुमेह, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग और अन्य दीर्घकालिक बीमारियों से पीड़ित लोगों को वर्षों तक दवाएं लेनी पड़ती हैं। यदि दवाओं पर होने वाला खर्च परिवार की आय का बड़ा हिस्सा निगलने लगे, तो मरीज इलाज बीच में छोड़ने को मजबूर हो सकते हैं। इसका असर उनके स्वास्थ्य के साथ परिवार की आर्थिक स्थिति पर भी पड़ता है। दवाओं को सुलभ बनाने के लिए प्रधानमंत्री भारतीय जनऔषधि परियोजना महत्वपूर्ण है। इसके तहत जनऔषधि केंद्रों पर गुणवत्तापूर्ण जेनेरिक दवाएं अपेक्षाकृत कम कीमत पर उपलब्ध कराई जाती हैं। लेकिन इस पहल का लाभ तभी व्यापक होगा, जब केंद्रों पर जरूरी दवाओं का नियमित भंडार हो और लोगों को इनके बारे में पर्याप्त जानकारी मिले। ग्रामीण क्षेत्रों, छोटे कस्बों और पिछड़े इलाकों में इन केंद्रों की पहुंच बढ़ाना जरूरी है।

सबसे पहले, आवश्यक दवाओं की कीमतों और उपलब्धता की नियमित निगरानी होनी चाहिए। राष्ट्रीय औषधि मूल्य निर्धारण प्राधिकरण को मूल्य नियंत्रण के दायरे में आने वाली दवाओं की कीमतों पर प्रभावी निगरानी रखनी चाहिए। जहां नियमों का उल्लंघन हो, वहां समयबद्ध कार्रवाई की जाए। साथ ही, आवश्यक दवाओं की सूची की समय-समय पर समीक्षा हो, ताकि आम बीमारियों के इलाज में इस्तेमाल होने वाली महत्वपूर्ण दवाएं उचित मूल्य पर उपलब्ध रहें। दूसरा, सरकारी अस्पतालों में मुफ्त दवाओं की व्यवस्था को मजबूत किया जाए। प्रत्येक अस्पताल में आवश्यक दवाओं की सूची के अनुसार न्यूनतम भंडार निर्धारित हो। दवाओं की कमी होने पर तत्काल वैकल्पिक आपूर्ति की व्यवस्था बने। इसके लिए डिजिटल भंडार प्रणाली लागू की जा सकती है, जिससे किस अस्पताल में कौन-सी दवा उपलब्ध है, इसकी जानकारी अधिकारियों को समय पर मिल सके। तीसरा, जनऔषधि केंद्रों को वास्तव में जनोपयोगी बनाया जाए।

चौथा, जेनेरिक दवाओं के प्रति भरोसा बढ़ाया जाए। चिकित्सकों को मरीजों के लिए उपयुक्त जेनेरिक विकल्पों की जानकारी देनी चाहिए। सरकारी स्वास्थ्य संस्थानों में, जहां चिकित्सकीय रूप से उचित हो, जेनेरिक दवाओं को प्राथमिकता दी जा सकती है। साथ ही, दवा कंपनियों पर गुणवत्ता मानकों का कड़ाई से पालन सुनिश्चित हो, ताकि कम कीमत का अर्थ कम गुणवत्ता बिल्कुल न हो। पांचवां, दवाओं की कीमत और उपलब्धता से संबंधित जानकारी सार्वजनिक की जाए। एक सरल आनलाइन पोर्टल और हेल्पलाइन के माध्यम से मरीजों को दवाओं की निर्धारित कीमत, नजदीकी जनऔषधि केंद्र और सरकारी अस्पतालों में उपलब्धता की जानकारी मिलनी चाहिए। डिजिटल सुविधा से वंचित लोगों के लिए यह जानकारी अस्पतालों, पंचायतों और स्वास्थ्य केंद्रों पर भी उपलब्ध कराई जाए। इसके अतिरिक्त, गरीब परिवारों और गंभीर बीमारियों से जूझ रहे मरीजों को आर्थिक सहायता देने वाली योजनाओं का लाभ सरलता से मिलना चाहिए।

स्वास्थ्य व्यवस्था की सफलता केवल अस्पतालों और चिकित्सकों की संख्या से नहीं मापी जा सकती। असली कसौटी यह है कि जरूरत पड़ने पर मरीज को सही दवा उचित कीमत पर मिलती है या नहीं। इसके लिए सरकार को स्पष्ट लक्ष्य, नियमित समीक्षा और जवाबदेही की व्यवस्था बनानी होगी। दवा तक पहुंच किसी की आमदनी पर निर्भर नहीं होनी चाहिए। सरकार, चिकित्सा जगत और दवा उद्योग को मिलकर ऐसी व्यवस्था बनानी होगी, जिसमें हर नागरिक को गुणवत्तापूर्ण दवा समय पर और अपनी आर्थिक क्षमता के भीतर मिल सके। आखिरकार, स्वस्थ नागरिक ही मजबूत राष्ट्र की नींव होते हैं।

(लेखक लोकनीति विश्लेषक हैं)

खरी-खरी

वोटर से बड़ा वोटर का नाम

मुकेश राठौर

लोकतंत्र में वोट का वही महत्व है जो बस में सीट का और घर में ईंट का होता है। आप चाहें तो सीट और ईंट को हाथ पर रख सकते हैं, लगे तो सिर-माथे पर भी धर सकते हैं, लेकिन वोट की...। वोट होता है, मगर दिखता नहीं। यह बात और है कि नेताओं को चलते-फिरते आदमी में सिर्फ वोट दिखाई देता है। एक्चुअली वोट वोटर के हाथ पर नहीं, हाथ में होता है। जैसे ही 'वो' अठारह साल का हुआ, वोटर बन जाता है। बस कहानी यहीं से शुरू होती है।

देश का जेन-जी एजुकेशन लोन के बूते क्या जाने कौन-से कालेज और नामालूम यूनिवर्सिटियों से पढ़-लिखकर कुछ बने या न बने, वोटर जरूर बन जाता है। सरकारी नौकरियों में नए पद सृजित करने और भरने का काम भले चुनावों के पहले हो, मगर नए मतदाता जोड़ने का काम बारहों मास चलता रहता है। साल में चार बार वोटर लिस्ट प्रकाशित होने लगी है। वोटर को लोकतंत्र की रचनात्मक और कार्यात्मक इकाई कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। बिन वोटर लोकतंत्र की कल्पना ही नहीं की जा सकती। वोटर से ही लोकतंत्र बनता और चलता है। वोटर जिधर-जिधर जाता है, वोट उसके साथ चलने लगता है। वोटर जिसे वोट दान कर दे, वोट उसकी झोली में चला जाता है। अब सामने वाला इन वोटों की पोटली बांधकर किधर चला जाए, उसकी मर्जी।

इन दिनों देश में वोट चोरी पर हल्ला मचा हुआ है। वोट चोरी का आरोप ईवीएम, बीवीपैट, मतदाता सूची से होते हुए निर्वाचन आयुक्त के इस्तीफे पर आकर ठहर गया है। आरोप यह कि एसआइआर के नाम पर वोटरों के नाम काट दिए गए। निर्वाचक नामावली से नाम कटा वोटर किस काम का! नाम कटा वोटर योद्धा नहीं, सीधे घुसपैठिया घोषित हो जाता है और फिर वह नाम जुड़ने तक कागजों की तलवारें लेकर दस्तावेज के दुश्मनों से लड़ता रहता है। चुनाव के समय ऐसे वोटर की पूछ-परख भी कम ही जाती है। वह होकर भी कुछ नहीं होता। यहां वोटर का मौके पर होने से ज्यादा महत्व नामावली में उसका नाम होने से है।

एक्स पोस्ट

राजनीतिक सहमति-असहमति अलग बात है, मगर राष्ट्रीयता का बोध सदैव रहना चाहिए। ड. आलोक द्विवेदी@alokdup

अखिलेश यादव ने योगी आदित्यनाथ को अयोध्या से चुनाव लड़ने की चुनौती दी, जिसे योगी ने स्वीकार कर लिया। योगी ने भी अखिलेश को यहां से नामांकन करने की चुनौती दी है। अगर अखिलेश ने इसे स्वीकार लिया तो मामला बहुत दिलचस्प हो जाएगा। शीला भट्ट@sheela2010

पहले गाली गलौज, फिर धक्का मुक्की, हाथापाई और जूते से पिटाई भी। ये सब हुआ यूपी कांग्रेस के लखनऊ आफिस में। यूपी कांग्रेस की नई अध्यक्ष आराधना मिश्रा ने विधिवत कार्यभार संभाला। पूर्व अध्यक्ष अजय राय भी पहुंचे। उनको लेकर कुछ कमेंट हुआ। फिर दोनों तरफ के समर्थक भिड़ गए। पंकज झा@pankajjha_



रूस से तेल खरीदने वाले देशों को दंडित करने के लिए अमेरिका ने ग्राहम एक्ट तैयार किया, लेकिन क्या अब वह इस कानून के तहत खुद पर भी कार्रवाई करेगा? आखिरकार, रूस से तेल खरीदने का एलान उसने भी तो किया ही है! विक्रम चंद्रा@vikramchandra

जागरण जनमत

कल का परिणाम

क्या एसआइआर के विरोध के बहाने अराजकता फैलाने की कोशिश हो रही है?



आज का सवाल

आराधना मिश्रा के प्रदेश अध्यक्ष बनने से उत्तर प्रदेश कांग्रेस में गुटबाजी बढ़ती दिख रही है?

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है

जनपथ

भिड़ने का है मूड तो भिड़ जाएं अखिलेश,
छोड़ सीएचई की धरा आय राम के देस।
आय राम के देस हाथ अजमाएं दो-दो,
कर ली है स्वीकार चुनौती बाबा ने तो!
असेंबली की जंग जा रही है अब छिड़ने,
पहलवान आए जाय अगर दम है तो भिड़ने!!
-ओम प्रकाश तिवारी



अजय शुक्ला
ajay.shukla@lko.jagran.com

उत्तर प्रदेश डायरी

अयोध्या की चुनौती में उलझे भैया-बाबा

पिछले दिनों अखिलेश यादव 'राजनीतिक संदेश' लेकर अयोध्या गए थे और भाजपा पर फिकरा कसने के चक्कर में मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ की और एक चुनौती उछाल आए। कहा कि भाजपा को अयोध्या में उम्मीदवार नहीं मिल रहा। सरकार ने विकास के नाम पर 'तोड़फोड़' की है और पवित्र स्थल पर 'चढ़ावा-चंदा-दान' की चोरी हुई है। सलाह दी कि, 'यदि मुख्यमंत्री अयोध्या में अपने काम और जीत को लेकर इतने ही आश्वस्त हैं, तो उन्हें स्वयं यहां से चुनाव लड़कर देखना चाहिए।'

उत्तर प्रदेश की सियासत पर नजर रखने वाले कहते हैं- इस बार गलत बयान हो गया। अखिलेश समर्थकों को लगा था कि भैया (अखिलेश) ने बाबा (योगी आदित्यनाथ) को घेर लिया, लेकिन बाबा ने बाउंसर उड़ा दिया। बाबा बोले- 'सपा के 'बबुआ' (अखिलेश) अभी से बौखला गए हैं। लड़ाई 'चेलों' से क्यों? ... मैं आपको आफर करता हूं, आइए आप भी श्री अयोध्या धाम में नामांकन करिए और मैं भी करता हूं, एक बार किस्मत आजमा लेते हैं।'

यहीं से खेल पलटा हुआ है। जैसे अखिलेश के फालोअर उन्हें व्यंग्यबाण चलाने में माहिर मानते हैं, वैसे ही मुख्यमंत्री योगी आदित्यनाथ के समर्थक उनकी सीधी-सपाट बयानी और 'ठोकने' वाली शैली के प्रशंसक हैं। बाबा के बाउंसर पर भैया अब बच-बचकर खेल रहे हैं। कह रहे हैं, मैंने तो केवल राजनीतिक सलाह दी थी। दोनों ओर से वक्तव्यों का उच्चार जारी है और इसके आगे भी जारी रहने की पूरी संभावना है। इस बार-पलटवार को उत्तर प्रदेश विधानसभा के अगले चुनाव का श्रीगणेशी-वक्तव्य माना जा रहा है।

राजनीति को करीब से समझने वाले कहते हैं कि फिकरेबाजी की लत अक्सर अनचाहे फिसलन की ओर भी ले जाती है। इस चुनौती विवाद से सपा प्रमुख के वे 'राजनीतिक संदेश' तो धुल ही गए, जिन्हें लेकर वे अयोध्या गए थे, बल्कि शुरुआत में ही चुनाव को भाजपा की उस पिच (अयोध्या के बहाने 80-20 की राजनीति) पर डाल आए, जिससे वे इन दिनों बचते रहे हैं। जबकि उनका राजनीतिक संदेश कुछ और था, जिसे वे कांग्रेस को प्रेषित करना चाह रहे थे।


योगी आदित्यनाथ। फाइल

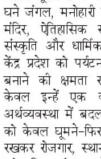

अखिलेश यादव। फाइल

सपा को उत्तर प्रदेश में दोहरी लड़ाई लड़नी पड़ रही है। भाजपा से बोट छीनने की और कांग्रेस से वोट बचाने की लड़ाई। आराधना मोना मिश्रा के प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष बनने के बाद सपा को भी अपना ब्राह्मण कार्ड दिखाना था। इसके लिए अयोध्या के पूर्व सपा विधायक तेज नारायण पांडेय उर्फ पवन पांडेय के घर भागवत कथा के बहाने आठ अक्टूबर को अखिलेश पहुंचे थे। पवन पांडेय वही हैं, जिन्होंने चढ़ावा चोरी के तथ्य एक्स पर पोस्ट किए थे और अखिलेश ने उन्हें री-पोस्ट कर देशव्यापी चर्चा में ला दिया। इसके बाद जो हुआ, सब जानते ही हैं और तभी से वह सपा के सबसे पहले घोषित होने वाले प्रत्याशियों में शुमार हो गए। अखिलेश बाबा को चुनौती न देते तो सपा के युवा ब्राह्मण चेहरे का पैरेटिव गढ़ा जा रहा होता और कांग्रेस भी सियासी तौर पर सहम रही होती। अब यह चर्चा सुस्त है। दरअसल, 2024 में जो राजनीति, जाति-समीकरणों और पीडीए के नारों के इर्द-गिर्द सिमटती नजर आ रही थी, उसे भाजपा ने अपनी सोशल इंजीनियरिंग के चलते काफी हद तक बराबर कर लिया है। संगठन में पंकज चौधरी की प्रदेश टीम और नितिन नवीन की राष्ट्रीय टीम से लेकर हाल के राज्यसभा चुनाव तक में भाजपा ने निर्ममता से समीकरणों को तरजीह दी है। यह जमीन पर कितने कारगर होंगे, यह तो भविष्य ही बताएगा, पर कागज पर ये गणितीय समीकरणों की तरह ठोस नजर आ रहे हैं।

रामनगरी अयोध्या सभी दलों को मौका देती रही है। लेकिन 1991 के बाद से 2012 का अपवाद छोड़ वह भाजपा के खाते में ही बनी रही। वर्ष 2012 में यही पवन पांडेय जीते और पहली बार में ही उन्हें अखिलेश ने मंत्री बना दिया था। सपा को उम्मीद है कि चढ़ावा चोरी का मुद्दा यदि काम कर गया तो पवन पांडेय दूसरी बार भी वह कमाल कर सकते हैं, जो उन्होंने 15 साल पहले किया था। लेकिन इसे मुख्यमंत्री योगी की व्यक्तिगत प्रतिष्ठा से जोड़ने के कारण राह कठिन हो गई है। वर्ष 2024 में जब सपा फैजाबाद संसदीय सीट की सभी चार सीटों पर बढ़त बनाए हुए थी, तब भी अकेली अयोध्या थी, जहां वर्तमान सपा सांसद अवधेश पासी 4,567 वोटों के अंतर से भाजपा के लल्लू सिंह से पीछे थे। बहरहाल, पवन पांडेय की जीत की दावेदारी चढ़ावा चोरी के प्रभावी मुद्दा बनने की प्रत्याशा तक सीमित है।

छत्तीसगढ़ डायरी

पर्यटन के विकास की संभावना



ड. सुनील गुप्ता
संपादकीय प्रभारी, बिलासपुर

छत्तीसगढ़ के पास पर्यटन की वह पूरी पूंजी मौजूद है, जिसकी तलाश दूसरे राज्य वर्षों से कर रहे हैं। घने जंगल, मनोहारी जलप्रपात, प्राचीन मंदिर, ऐतिहासिक स्थल, जनजातीय संस्कृति और धार्मिक आस्था से जुड़े केंद्र प्रदेश को पर्यटन का बड़ा गंतव्य बनाने की क्षमता रखते हैं। जरूरत केवल इन्हें एक व्यवस्थित पर्यटन अर्थव्यवस्था में बदलने की है। पर्यटन को केवल घूमने-फिरने तक सीमित न रखकर रोजगार, स्थानीय कारोबार और सांस्कृतिक संरक्षण से जोड़ा जाए तो यह प्रदेश की अर्थव्यवस्था का महत्वपूर्ण आधार बन सकता है। बस्तर में माओवाद के खात्मे के बाद पर्यटन की संभावनाएं और बढ़ गई हैं।

छत्तीसगढ़ में इस दिशा में कई पहल चल रही हैं। राम वनगमन पर्यटन परिपथ धार्मिक और सांस्कृतिक विरासत को नए सिरे से सामने लाने वाली महत्वपूर्ण परियोजना है। धार्मिक मान्यताओं में भगवान श्रीराम के वनवास से जुड़े दंडकारण्य क्षेत्र के अनेक स्थलों को पर्यटन सुविधाओं से जोड़ने की तैयारी है। 31 स्थलों पर साधु-संतों के लिए आश्रम, सीता की रसोई और सत्संग भवन जैसी सुविधाएं विकसित की जाएंगी। यह पूरा काम तीन चरणों में किया जाना प्रस्तावित है। प्राथमिकता वाले 20 स्थलों पर बुनियादी सुविधाएं विकसित की जाएंगी। यह पहल तभी सार्थक होगी, जब धार्मिक महत्व वाले स्थलों को केवल निर्माण कार्यों तक सीमित न रखा जाए। वहां पहुंचने के लिए बेहतर सड़क, स्वच्छता, पेयजल, पार्किंग, सूचना केंद्र, संकेतक और सुरक्षित ठहरने की व्यवस्था भी उतनी ही जरूरी है।

पर्यटक किसी स्थल को देखने के बाद आसपास के दूसरे आकर्षक स्थलों तक आसानी से पहुंच सकें, ऐसी पूरी यात्रा व्यवस्था तैयार करने की आवश्यकता है। श्री रामलला दर्शन योजना भी धार्मिक पर्यटन को व्यापक परिप्रेक्ष्य देने वाली पहल है। अयोध्या यात्रा के लिए वैकल्पिक ट्रेन संचालन जैसी व्यवस्थाएं श्रद्धालुओं की यात्रा को सुगम बना सकती हैं। लेकिन ऐसी योजनाओं का प्रभाव केवल दर्शन तक सीमित नहीं होना चाहिए। यात्रा से जुड़े लोगों की समय पर सूचना, परिवहन, भोजन, ठहरने और मार्गदर्शन की सुविधा मिले, तभी इसका वास्तविक लाभ सामने आएगा। प्रदेश के पर्यटन विकास की अगली चुनौती यह है कि पर्यटक किसी एक स्थल तक पहुंचकर वापस न लौटे। इसके लिए मिनी पर्यटन सर्किट प्रभावी उपाय हो सकता है।

रोजगार का बड़ा आधार : पर्यटन के विस्तार से होटल, होम-स्टे, भोजनालय, स्थानीय परिवहन, टूर गाइड, हस्तशिल्प, स्मृति चिह्न, फोटोग्राफी और यात्रा प्रबंधन जैसे क्षेत्रों में रोजगार बढ़ सकता है। विशेष रूप से ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में स्थानीय युवाओं को प्रशिक्षण देकर उन्हें सीधे पर्यटन अर्थव्यवस्था से जोड़ा जा सकता है। महिलाओं के स्व सहायता समूह स्थानीय भोजन, हस्तशिल्प और पारंपरिक उत्पादों को बाजार उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। छत्तीसगढ़ की सबसे बड़ी ताकत उसकी जनजातीय और लोक संस्कृति है। इसे केवल पर्यटकों के सामने प्रदर्शन की वस्तु बना देना उचित नहीं होगा। पर्यटन के प्रचार का तरीका भी बदलने की जरूरत है। आज पर्यटक यात्रा तय करने से पहले इंटरनेट पर स्थान, दूरी, मौसम, होटल, रास्ते, टिकट और आसपास के आकर्षण को जानकारी तलाशता है। ऐसे में डिजिटल प्लेटफार्म पर आकर्षक और प्रामाणिक जानकारी उपलब्ध होना जरूरी है।

विश्वकोट वनगंगा लोधल डेस्टिनेशन : प्रदेश सरकार में मंत्री राजेश अग्रवाल ने बस्तर के विश्वप्रसिद्ध चित्रकोट जलप्रपात को ग्लोबल डेस्टिनेशन के रूप में विकसित करने के लिए आवश्यक प्रक्रियाएं दो सप्ताह के भीतर पूरी करने के निर्देश दिए। उन्होंने निर्धारित समय-सीमा के भीतर डीपीआर एवं प्रेजेंटेशन तैयार करके भारत सरकार के पर्यटन मंत्रालय को प्रस्ताव भेजने को कहा है।


बस्तर स्थित चित्रकोट जलप्रपात। फाइल

पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए सरकार फिर से पहल कर रही है। बीते दिनों पर्यटन, संस्कृति, धार्मिक न्यास एवं धर्मस्व मंत्री राजेश अग्रवाल ने नवा रायपुर स्थित निवास कार्यालय में विभागीय योजनाओं और विकास कार्यों की समीक्षा की। उन्होंने पर्यटन परियोजनाओं को प्राथमिकता देते हुए तय समय-सीमा में पूरा करने के निर्देश दिए। मंत्री ने कहा कि छत्तीसगढ़ की प्राकृतिक सुंदरता, ऐतिहासिक धरोहर, धार्मिक स्थल और जनजातीय संस्कृति को आधुनिक सुविधाओं से जोड़कर प्रदेश को राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर विशिष्ट पहचान दिलाना सरकार की प्राथमिकता है।

डिजिटल पोर्टल : कलाकारों के पंजीयन के लिए चिन्हारी पोर्टल को अपडेट करने, कलाकार दलों के श्रेणी उन्नयन और सांस्कृतिक कार्यक्रमों के पारदर्शी आवंटन के लिए आनलाइन पोर्टल विकसित करने के निर्देश दिए हैं। संस्कृतिक पीठों के हस्तांतरण व पुनः संचालन की प्रक्रिया जल्द पूरी करने को कहा गया है। पुरातत्व विभाग को सिरपुर के सुरंग टीला व पुरखौती मुक्तांगन में निर्यमित लाइट एंड साउंड शो, अंबिकापुर संग्रहालय के उन्नयन और महंत घासीदास संग्रहालय में ऐतिहासिक समग्री के व्यवस्थित प्रदर्शन पर जोर दिया गया। इससे पर्यटन विकास की उम्मीद जगी है।

भारत को जापान से मिला 5.71 अरब डालर का निवेश

नई दिल्ली : चालू वित्त वर्ष 2026-27 की पहली तिमाही (अप्रैल-जून) में जापान, भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश (एफडीआइ) का सबसे बड़ा स्रोत बनकर उभरा है। इस दौरान जापान से 5.71 अरब डालर का निवेश आया, जो पूरे वित्त वर्ष 2025-26 में आए 3.74 अरब डालर से अधिक है। वित्त वर्ष 2025-26 में जापान से भारत में 2.48 अरब डालर का निवेश आया था। (पृ2)

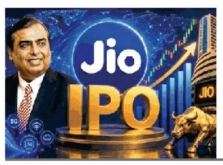


आरबीआइ द्वारा हाल ही में किए गए रेपो रेट में वृद्धि से कंपनी के शुद्ध ब्याज मार्जिन में मामूली सुधार होने की उम्मीद है।
- अजय शुक्ला, एमडी और सीईओ, पंजाब नेशनल बैंक

आइपीओ की रकम से कर्ज चुकाएगी जियो प्लेटफार्म्स

कंपनी पर 30 हजार करोड़ का कर्ज, 37 हजार करोड़ से अधिक हो सकता है देश के सबसे बड़े सार्वजनिक निर्गम का आकार

- कंपनी की दीर्घकालिक योजना को काफी हद तक प्रभावित करेगी आइपीओ की सफलता
- परिसंपत्तियों का हो सकेगा बेहतर मूल्यांकन, 5जी, 6जी विस्तार में कंपनी को मिलेगी मदद



जागरण ब्यूरो, नई दिल्ली : रिलायंस समूह की डिजिटल और टेलीकाम सब्सिडियरी जियो प्लेटफार्म्स लिमिटेड का बहुप्रतीक्षित मेगा आइपीओ अब अंतिम चरण में पहुंच चुका है। तकरीबन दो दशक बाद (2007 में रिलायंस पेट्रोलियम के बाद) समूह की कोई प्रमुख कंपनी शेयर बाजार में उतर रही है।

शेयर बाजार में भारी अस्थिरता के बावजूद इस आइपीओ को लेकर आम और खास निवेशकों में काफी उत्सुकता है। कंपनी की रणनीति की जानकारी रखने वाले लोगों का कहना है कि उक्त आइपीओ की सफलता कंपनी की दीर्घकालिक योजना को काफी हद तक प्रभावित करेगी। कंपनी को उम्मीद है कि इससे उसकी परिसंपत्तियों का बेहतर मूल्यांकन होगा। आइपीओ का अनुमानित आकार 30,000 से 37,700 करोड़ रुपये के आसपास है, जिससे यह भारत का सबसे बड़ा आइपीओ बन सकता है। कंपनी की ड्राफ्ट रेड हेरिंग प्रास्पेक्टस (डीआरएचपी) के अनुसार जुटाई गई राशि का बड़ा हिस्सा (लगभग 27,500 करोड़ रुपये) सब्सिडियरी रिलायंस जियो इन्फोकाम लिमिटेड (आरजेआइएल) के पुराने कर्ज को समय से पहले चुकाने में किया जाएगा। इससे कंपनी के पास आगे के विस्तार के लिए अतिरिक्त संसाधन उपलब्ध होंगे और 5जी व 6जी समेत भविष्य की बड़ी कैपेक्स योजनाओं के लिए उसके पास धन मौजूद होगा।

31 मार्च, 2026 तक के आंकड़े बताते हैं कि रिलायंस जियो इन्फोकाम पर मूलधन के तौर पर लगभग 30,057 करोड़ रुपये का पुराना कर्ज था। ये मुख्य रूप से बाह्य वाणिज्यिक उधार (ईसीबी) से जुड़ा है, जिन्हें 2022 व 2023 में अंतरराष्ट्रीय और घरेलू बैंकों के कंसोर्टियम से लिया गया था, जिसका भुगतान किया जाना है। ये लोन मुख्य रूप से सेवेदृम अधिग्रहण और नेटवर्क विस्तार जैसे पूंजीगत व्यय के लिए उठाए गए थे, जो वर्ष 2028 के करीब परिपक्व होने जा रहे हैं। कर्ज चुकाने के बाद बची हुई राशि का इस्तेमाल विपणन व ब्रांड बिल्डिंग, वर्किंग कैपिटल की जरूरतों को पूरा करने या अन्य आकस्मिक व्ययों में किया जाएगा। कंपनी की नजर फिक्स्ड ब्राडबैंड विस्तार, एआइ और क्लाउड सेवाओं, एंटरप्राइज डिजिटल सोल्यूशंस तथा अंतरराष्ट्रीय टेक्नोलाजी पार्टनरशिप पर है। इसके लिए अतिरिक्त संसाधन जुटाने की क्षमता बढ़ेगी।

21 अक्टूबर को खुल सकता है आइपीओ

आम निवेशकों के लिए आइपीओ 21-23 अक्टूबर तक खुलने की उम्मीद है। प्राइस बैंड अभी आधिकारिक रूप से घोषित नहीं हुआ है, लेकिन विभिन्न रिपोर्ट्स में 1,065-1,119 रुपये या उससे ऊपर के अनुमान हैं।

ये कंपनियां भी जुटाएंगी रकम	
अवाडा इलेक्ट्रो	7,600 करोड़ रुपये
जेटवर्क	5,000 करोड़
एयूजन सीएक्स	702 करोड़ रुपये
एडी फायर प्रोटेक्ट	712 करोड़

(टोन्नो इमेजिंग, बीनाफिलियोली ट्रांसमिशंस, सहजानंद मेडिकल टेक्नोलाजीज, पारस हेल्थकेयर, एनडीआर इनविट ट्रस्ट, गुजरात विद्यूत फोर्जिंग्स, एसएफसी एनवायरन्मेंटल टेक्नोलाजीज भी बाजार में उतरेंगी।)

एक दर्जन कंपनियां आइपीओ लाने की तैयारी में

अक्टूबर में जियो प्लेटफार्म्स सहित एक दर्जन कंपनियां आइपीओ लाने की तैयारी में हैं। इन कंपनियों के आइपीओ से प्रौद्योगिकी, स्वास्थ्य सेवा, नवीकरणीय ऊर्जा, रक्षा और विनिर्माण जैसे क्षेत्रों में निवेश के अवसर मिलने की उम्मीद है। इस साल 96 आइपीओ से कंपनियों ने 1.1 लाख करोड़ रुपये से अधिक की राशि जुटाई है। इनमें अकेले सितंबर में 35 आइपीओ बाजार में आए थे।

बिजनेस से जुड़ी खबरों और अपडेट के लिए स्कैन करें या विजिट करें jagran.com

एफपीआइ ने 2026 में निकाले तीन लाख करोड़ से ज्यादा



अक्टूबर में अब तक विदेशी निवेशकों ने 44,166 करोड़ के शेयर बेचे, 2025 में कुल 1.66 लाख करोड़ रुपये निकाले थे

नई दिल्ली, पृ2 : भारतीय शेयर बाजार से विदेशी पोर्टफोलियो निवेशकों (एफपीआइ) की बिकवाली का सिलसिला लगातार जारी है। अक्टूबर में अब तक विदेशी निवेशकों ने 44,166 करोड़ रुपये के शेयर बेचे हैं। इसके साथ ही वर्ष 2026 में अबतक उनकी कुल निकासी 3.04 लाख करोड़ के पार पहुंच गई है। इस सख्त अब तक हुई निकासी पिछले पूरे वर्ष के मुकाबले काफी अधिक है। वर्ष 2025 के दौरान विदेशी निवेशकों ने भारतीय शेयर बाजार से कुल 1.66 लाख करोड़ निकाले थे। कच्चे तेल की ऊंची कीमतों, मजबूत डालर और अमेरिकी बांड पर बढ़ते रिटर्न से विदेशी निवेशकों का रुझान भारतीय बाजार से कमजोर हुआ है।

नेशनल सिक्योरिटीज डिपाजिटरी लिमिटेड (एनएसडीएल) के अनुसार, विदेशी निवेशकों ने सितंबर में भी भारतीय शेयर बाजार से 35,861 करोड़ निकाले थे। हालांकि, जुलाई में उन्होंने 20,200 करोड़ और अगस्त में 29,631 करोड़ का निवेश किया था। विदेशी निवेशकों ने सितंबर में भारतीय ऋण या बांड बाजार में भी बिकवाली की है। उन्होंने पूर्ण पहुंच मार्ग (एफएआर) के तहत 1,921 करोड़ और स्वैच्छिक प्रतिधारण मार्ग (वीआरआर) के तहत 233 करोड़ रुपये निकाले हैं।

एमडीआर को 0.40% से घटाकर 0.08 प्रतिशत करने का सुझाव

- आइआइटी बांबे ने कहा-मौजूदा व्यवस्था में बैंकों को होने वाली मोटी कमाई से अलग रखा जाए
- बैंकों ने कासा डिपाजिट के जरिये पिछले वर्ष अच्छा पैसा कमाया, यह मुफ्त सेवा देने के लिए पर्याप्त



मुंबई, पृ2 : आइआइटी बांबे की एक रिपोर्ट में यूपीआइ ट्रांजेक्शन पर मर्चेंट डिस्काउंट रेट (एमडीआर) को अभी के 0.40 प्रतिशत से घटाकर 0.08 प्रतिशत करने की सलाह दी गई है। रिपोर्ट में आइआइटी के प्रोफेसर आशीष दास और आरबीआइ में पहले काम कर चुकीं प्रज्ञा दास ने कहा कि फोनपे और गूगल पे जैसे थर्ड पार्टी एप्लीकेशन प्रोवाइडर्स (ये ज्यादातर बैंक हैं) को उनकी सेवाओं के लिए पैसे मिलने चाहिए। रिपोर्ट में थर्ड पार्टी एप्लीकेशन प्रोवाइडर्स के लिए एमडीआर को एनपीसीआइ के बताए 0.08 प्रतिशत से घटाकर 0.06 प्रतिशत करने और पेमेंट सर्विस प्रोवाइडर्स का हिस्सा 0.02 पर बनाए रखने की सलाह दी गई है।

रिपोर्ट में कहा गया है कि मौजूदा व्यवस्था में बैंकों को होने वाली मोटी कमाई (बल्क शेयर) से अलग रखने की बात कही गई है, ताकि इस शुल्क का सही फायदा पेमेंट सर्विस प्रोवाइडर्स और बुनियादी ढांचे को मिलने पाए। रिपोर्ट में कहा गया है कि बैंकों ने पिछले वित्त वर्ष में सीएएस डिपाजिट के जरिये 4.85 लाख करोड़ से ज्यादा का शुद्ध ब्याज मार्जिन कमाया और यह कम से कम मुफ्त सेवा देने के लिए पर्याप्त है। रिपोर्ट में यह भी सुझाव दिया गया है कि एमडीआर केवल उन्हीं व्यापारियों पर लगाया जाना चाहिए जिनका सालाना टर्नओवर 50 करोड़ रुपये से अधिक है। रिपोर्ट में लोन रीपेमेंट (कर्ज वापसी) और लोन ईएमआइ के डिजिटल भुगतान को पूरी तरह मुफ्त रखने की सिफारिश की गई है, भले ही वे दो हजार रुपये से ऊपर क्यों नहीं हो। एनपीसीआइ ने 15 सितंबर के अपने सर्कुलर में दो हजार से ऊपर के कुछ मर्चेंट भुगतानों पर 0.4% एमडीआर लगाने की बात कही थी, जिसे लेकर बैंक व्यापारियों और इंडस्ट्री में काफी चर्चा है।

इस्पात नीति का मसौदा जारी क्षेत्र को प्रतिस्पर्धी बनाना लक्ष्य



- वैश्विक प्रतिस्पर्धी क्षमता मजबूत और आयात पर निर्भरता कम करने का उद्देश्य
- इस्पात उत्पादन की कुल लागत में कच्चे माल की हिस्सेदारी लगभग 65 से 70% रहती है

नई दिल्ली, पृ2 : केंद्र सरकार ने देश के इस्पात क्षेत्र की उत्पादन क्षमता बढ़ाने, वैश्विक प्रतिस्पर्धी क्षमता मजबूत करने और आयात पर निर्भरता कम करने के उद्देश्य से नई राष्ट्रीय इस्पात नीति-2047 का मसौदा जारी किया है। इसके तहत वर्ष 2047 तक भारत की कच्चे इस्पात की उत्पादन क्षमता बढ़ाकर 60.4 करोड़ टन करने का लक्ष्य रखा गया है। नीति के मसौदे अनुसार, 2047 तक तैयार इस्पात की मांग 50.5 करोड़ टन, प्रति व्यक्ति इस्पात खपत 302 किलोग्राम और इस्पात निर्यात 4.5 करोड़ टन तक पहुंचाने का लक्ष्य है।

इस्पात उत्पादन की कुल लागत में कच्चे माल की हिस्सेदारी लगभग 65 से 70 प्रतिशत होती है। भारत लौह अयस्क के मामले में काफी हद तक आत्मनिर्भर है, लेकिन कोकिंग कोयले की लगभग 92 प्रतिशत जरूरत को आयात से पूरा करता है। इस निर्भरता को कम करने के लिए सरकार घरेलू खनन को बढ़ावा देने, कोल वाशरी की क्षमता बढ़ाने, विदेशों में खनन परिसंपत्तियों के अधिग्रहण, दीर्घकालिक आपूर्ति समझौतों और एआइ आधारित कोयला मिश्रण के महत्तम इस्तेमाल पर ध्यान देगी। इसके अलावा मैंगनीज और चूना पत्थर जैसे अन्य आवश्यक खनिज की दीर्घकालिक उपलब्धता सुनिश्चित करने के लिए भी कदम उठाए जाएंगे।

त्योहारी सेल के पहले दो दिन में ई-कामर्स कंपनियों ने 24,000 करोड़ का सामान बेचा



- मोबाइल फोन की हिस्सेदारी 38-40% यानी 9,100 से 9,600 करोड़ रुपये रहने का अनुमान
- कुल बिक्री में इलेक्ट्रानिक्स उत्पादों की हिस्सेदारी लगभग छह से साढ़े छह हजार करोड़ रुपये रही

टियर-2 ग्राहकों ने किफायती कीमतों पर त्योहारी कपड़े खरीदे

रेडसीर स्ट्रैटेजी कंसल्टेंट्स के एसोसिएट पार्टनर निखिल दलाल ने बताया कि किफायती फैशन उत्पादों की मांग सबसे अलग नजर आई, क्योंकि टियर-2 ग्राहकों ने किफायती कीमतों पर त्योहारी कपड़े खरीदे। शुरुआती दो दिन में सकल व्यापारिक मूल्य 2.5 अरब डालर से अधिक रहा।

नई दिल्ली, पृ2 : त्योहारी सत्र की सेल के पहले दो दिन में ई-कामर्स कंपनियों ने करीब 24,000 करोड़ रुपये का सामान बेचा है। आर्डर की संख्या में जोरदार बढ़ोतरी के दम पर यह बिक्री दर्ज की गई, जिसमें मूल्य के लिहाज से मोबाइल फोन की हिस्सेदारी सबसे अधिक रही। परामर्श कंपनी रेडसीर स्ट्रैटेजी कंसल्टेंट्स का अनुमान है कि ग्राहकों ने अमेजन, फ्लिपकार्ट, मीशो, आजिओ और कई अन्य आनलाइन प्लेटफार्म पर कुल मिलाकर लगभग आठ से नौ करोड़ आर्डर दिए। यह वृद्धि सामान्य कारोबारी दिनों की दैनिक औसत दर से लगभग छह गुना अधिक रही।

अमेजन और फ्लिपकार्ट जैसी कंपनियां बिक्री के लिए अपनी 'क्विक कामर्स' इकाइयों का उपयोग कर रही हैं, जिससे सामान्य दिन के दैनिक औसत से चार से पांच गुना अधिक जीएमवी दर्ज किया। अनुमानों के अनुसार, कुल बिक्री में मोबाइल फोन की हिस्सेदारी 38 से 40 प्रतिशत यानी 9,100 से 9,600 करोड़ रहने का अनुमान है। कुल बिक्री में उपभोक्ता इलेक्ट्रानिक्स की हिस्सेदारी 25 से 27 प्रतिशत (6,000 से 6,500 करोड़ रुपये) और फैशन उत्पादों की हिस्सेदारी 15 से 18 प्रतिशत (3,630 से 4,350 करोड़ रुपये) रहने का अनुमान है। रेडसीर के अनुसार, शुरुआती दिन खरीदारी करने वालों में लगभग एक-तिहाई हिस्सेदारी 'जेन जेड' (युवा पीढ़ी) की रही।

राष्ट्रीय फलक

न्यूज गैलरी

बिहार में ट्रेन में रील बनाने को खोल दिया अग्निशमन सिलिंडर

समस्तीपुर : बिहार के समस्तीपुर में अवध एक्सप्रेस में रील बनाने के चक्कर में कोच में रखे अग्निशमन सिलिंडर को ही खोल दिया गया। इससे जनरल कोच धुएं से भर गया और यात्रियों के बीच अफरातफरी मच गई। इस दौरान तीन लोग वीडियो शूट करते रहे। घटना शनिवार रात की है। अवध एक्सप्रेस जब समस्तीपुर जंक्शन के प्लेटफार्म संख्या चार पर पहुंची, तो तीन लोग ट्रेन के सामान्य डिब्बे में चढ़ गए और अग्निशमन सिलिंडर की नाब खोल दिया। धुआं फैलते ही यात्रियों को कुछ समझ में नहीं आया। वे कंबर-उधर भागने लगे। गश्त कर रहे रेलवे सुरक्षा बल के जवान की नजर वीडियो शूट करते लोगों पर पड़ी। उन्होंने तीनों को पकड़ लिया। इनमें दो बालिग और एक नाबालिग है। (जास)

अमृतसर एयरपोर्ट पर मंडराते दिखे ड्रोन, तीन उड़ानें डायवर्ट

अमृतसर : अमृतसर के श्री गुरु रामदास जी अंतरराष्ट्रीय हवाई अड्डे पर रविवार देर रात एयरपोर्ट और उसके आसपास तीन संदिग्ध ड्रोन उड़ते दिखाई दिए। सुरक्षा के मद्देनजर रात 9:32 बजे अमृतसर आ रही तीन उड़ानों को डायवर्ट कर दिया। रात करीब 10:15 बजे हवाई सेवाओं को फिर से बहाल कर दिया। रविवार देर रात एयरपोर्ट पर तैनात सीआइएसएफ के जवानों ने एयरपोर्ट परिसर और बाहर तीन ड्रोन उड़ते देखे। जवानों ने तुरंत इसकी सूचना कंट्रोल रूम को दी। सुरक्षा समीक्षा के बाद रात 10:15 बजे के आसपास एयरपोर्ट का संचालन सामान्य कर दिया गया। (जास)

केंद्रीय जेल लुधियाना का सहायक अधीक्षक गिरफ्तार

लुधियाना : लुधियाना की केंद्रीय और बोस्टल जेल में कैदियों तक मोबाइल, नशा व अन्य प्रतिबंधित सामान पहुंचने के मामले में जेल अधिकारियों की मिलीभगत सामने आई है। सेंट्रल जेल में चार मोबाइल और 86 ग्राम अफीम मिलने में विभागीय जांच के बाद थाना डिवीजन सात की पुलिस ने सहायक अधीक्षक रिश्वपाल गोयल को गिरफ्तार किया गया है। वहीं, बोस्टल जेल में कैदियों से पैसे लेकर प्रतिबंधित सामान उपलब्ध करवाने के आरोप में सहायक अधीक्षक हरमिंदर सिंह, वार्डर बलजीत सिंह और चार विचाराधीन कैदियों के खिलाफ केस दर्ज किया गया है। (जास)

मेरठ में बीड़ी जलाने के विवाद में पूर्वोत्तर और स्थानीय छात्रों में खूनी संघर्ष, कई घायल

जागरण संवाददाता, मेरठ

- देर रात पार्टी के दौरान चलीं बोतलें और पत्थर, छह घायल, मुकदमा दर्ज
- अरुणाचल के छात्रों ने लगाया छात्राओं को तुकर्म की धमकी का आरोप



अरुणाचल और सिक्किम के छात्रों से पूछताछ करते थाना प्रभारी और क्षेत्राधिकारी। जागरण

पार्टी के दौरान सिगरेट और बीड़ी जलाने के विवाद ने इतना तूल पकड़ा कि स्थानीय छात्रों और अरुणाचल प्रदेश-सिक्किम के छात्रों के बीच खूनी संघर्ष हो गया। दोनों गुटों ने एक-दूसरे पर बीयर की बोतलों और ईंट-पत्थरों से हमला किया, जिसमें छह छात्र घायल हो गए। आरोप है कि रविवार को स्थानीय युवकों ने बाजार जा रहीं अरुणाचल प्रदेश की छात्राओं को रोककर तुकर्म करने की धमकी भी दी। पुलिस ने घायल छात्रों का मेडिकल कराया और मुकदमा दर्ज कर लिया। अरुणाचल प्रदेश के पूर्व डीजीपी रोबिन हिबू ने उत्तर प्रदेश के डीजीपी राजीव कृष्ण और एसएसपी बीबीजीटीएस मूर्ति से इस मामले को लेकर बातचीत की।

अरुणाचल प्रदेश और सिक्किम के करीब 80 छात्र-छात्राएं सुभारती यूनिवर्सिटी में पढ़ते हैं और सुशांत सिटी और गाडविन कालोनी में रहते हैं। सुभारती में अध्ययनरत मुजफ्फरनगर के शाहदा, बागपत के उबैस और हस्तिनापुर के गौरव भी सुशांत सिटी में किराये पर रहते हैं। शनिवार रात 12:30 बजे पूर्वोत्तर और स्थानीय छात्र अलग-अलग पार्टी कर रहे थे। गौरव ने सिक्किम के संजू से सिगरेट मांगी। सिगरेट नहीं होने की बात कहते हुए उसने बीड़ी दे दी। अब गौरव ने लाइटर से बीड़ी जलाने की कहा, लेकिन संजू ने इन्कार कर दिया।

इसी को लेकर मारपीट शुरू हो गई। दोनों तरफ से एक दूसरे पर बीयर व शराब की बोतलें फेंकी गईं। पथराव भी किया गया। हमले में सिक्किम के संजू, अरुणाचल के सितम ताके और युकुम ताके व स्थानीय छात्र गौरव, शादाब और उबैस घायल हो गए। रविवार को दिल्ली से अरुणाचल व सिक्किम यूनियन के पदाधिकारियों का प्रतिनिधिमंडल मनीले ताले के नेतृत्व में मेरठ पहुंचा और एसएसपी से मिला।

जालंधर में बच्चे की बर्थडे पार्टी में चलीं गोलियां, महिला की मौत



अमनदीप कौर।

जागरण संवाददाता, जालंधर : जालंधर में शनिवार रात करीब 10 बजे बच्चे की बर्थडे पार्टी में गोलियां चलने से एक महिला की मौत हो गई। गोली लगने से एक बच्चा और फोटोग्राफर घायल हो गए। मृतका की पहचान होशियारपुर की रहने वाली 42 वर्षीय अमनदीप कौर के रूप में हुई है।

इस घटना के संबंध में पुलिस ने हत्या का केस दर्ज कर जांच शुरू कर दी है। गांव ढुढ्डा के मोता सिंह की बेटी जसमीनी में रहती है और उनके घर बेटे का जन्म हुआ था। बच्चे की जन्मतिथि की खुशी में मोता सिंह ने गांव में पार्टी रखी थी। पार्टी में मोता सिंह के दामाद का मामा भी शामिल हुआ था। आरोप था कि पार्टी के दौरान जब सभी डांस कर रहे थे तभी उक्त व्यक्ति ने गोलियां चला दीं। फायरिंग में मोता सिंह के साले की बहू अमनदीप कौर की मौके पर ही मौत हो गई।

न्यूजीलैंड से आए बेटे ने फुफेरे भाई संग की सौतेले पिता की हत्या

जागरण संवाददाता, रामपुर

शनिवार शाम कारोबारी नवजोत सिंह की ताबड़तोड़ फायरिंग कर हत्या मामले में अहम राजफाश हुआ है। उसकी हत्या न्यूजीलैंड से लौटे सौतेले बेटे ने फुफेरे भाई के साथ मिलकर की थी। आरोपित सौतेला बेटा मां के साथ नवजोत की शादी से नाराज था। हत्यारोपित बारदात की अंजाम देते हुए सीसीटीवी में कैद हो गए। पुलिस ने आठ लोगों के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की है।

30 वर्षीय नवजोत की "गिल बाशिंग हब" के नाम से दुकान है। वह शनिवार शाम करीब पांच बजे अपनी दुकान पर बैठा था। कार से आए दो हमलावर ने ताबड़तोड़ फायरिंग कर उनकी हत्या कर दी। सीसीटीवी फुटेज खंगालने पर पुलिस को आरोपितों के बारे में जानकारी मिली। करीब तीन वर्ष पहले नवजोत की पत्नी ने मायके में आत्महत्या कर ली थी। इस आरोप में वह जेल में रहा और करीब दो वर्ष पहले जमानत पर छूटा। इसके बाद उसका अपने से 10 वर्ष बड़ी सौतेली मां नवजोत के साथ रहना पसंद नहीं था। इसको लेकर पंचायत भी हुई थी। कमल कौर के बेटा अबदीप सिंह कुछ दिन पहले न्यूजीलैंड से लौटा था। आरोप है कि उसने हत्या के लिए एक पुरानी कार खरीदी। इसके बाद फुफेरे भाई राजनदीप के साथ मिलकर बारदात को अंजाम दिया।

- सीसीटीवी कैमरे में कैद हुए हत्यारोपित, आठ के खिलाफ प्राथमिकी



मृतक नवजोत सिंह। सौजन्य : स्वजन

कमल कौर से प्रेम प्रसंग हुआ। दोनों ने शादी कर ली। कमल के पति की भी तीन वर्ष पूर्व मौत हो चुकी है। उसके दोनों बेटे न्यूजीलैंड में नौकरी करते हैं। उन्हें अपनी मां का नवजोत के साथ रहना पसंद नहीं था। इसको लेकर पंचायत भी हुई थी। कमल कौर के बेटा अबदीप सिंह कुछ दिन पहले न्यूजीलैंड से लौटा था। आरोप है कि उसने हत्या के लिए एक पुरानी कार खरीदी। इसके बाद फुफेरे भाई राजनदीप के साथ मिलकर बारदात को अंजाम दिया।

छत्तीसगढ़ में मां का घर में, बेटे का 20 किमी दूर मिला शव

नईदुनिया प्रतिनिधि, बिश्रामपुर



पुत्र सुजल के साथ मां रजनी बरेठ।

छत्तीसगढ़ के सूरजपुर जिले के बिश्रामपुर थाना क्षेत्र में 40 वर्षीय शिक्षिका रजनी बरेठ और उनके 17 वर्षीय पुत्र सुजल की हत्या कर दी गई। शनिवार को दोनों के शव अलग-अलग मिले। रजनी का शव घर के बाथरूम में, जबकि सुजल का शव घर से करीब 20 किमी दूर गड्ढे में पाया गया। दोनों के शरीर पर चोट के घातक निशान मिले। किशोर की स्कूटी घर से करीब 500 मीटर दूर पेट्रोल पंप पर लावारिस खड़ी मिली। मृतका का पांच वर्ष पूर्व तलाक हो चुका था। वह पुत्र के साथ रहती थी। पुलिस संदिग्धों से पूछताछ कर रही है।

पुलिस के अनुसार, शनिवार की सुबह किशोर का शव मिला था। उस समय तक शव की पहचान नहीं हो पाई थी। शनिवार को देर शाम जांजगीर-चांपा जिले के रहने वाले मृतक के मामा-मामी व नानी बिश्रामपुर पहुंचे थे। घर पर ताला लगा होने व सुजल व उसकी मां के फोन नहीं उठाने से आशंकित होकर वे थाने पहुंचे। थाने में संदेह के आधार पर पुलिस ने उन्हें किशोर के शव की फोटो दिखाई, जिसकी पहचान उसके मामा ने सुजल बरेठ के रूप में की। उन्होंने बताया कि सुजल की मां भी फोन नहीं उठा रही थीं। संदेह के आधार पर पुलिस ने शनिवार की रात घर का ताला तोड़ा तो बाथरूम में रजनी का शव मिला। पुलिस को शवों के पास से मोबाइल नहीं मिले।

झारखंड में वेदांता स्टील प्लांट में गैस रिसाव की आशंका, दो की मौत

जास, कोकारो : झारखंड के कोकारो स्थित वेदांता ईएसएल स्टील प्लांट में रविवार सुबह गैस की चपेट में आने से दो कर्मियों की मौत हो गई। मृतकों की पहचान कंपनी के शिफ्ट इंचार्ज हजारीबाग निवासी 40 वर्षीय सोहन महतो और धनबाद निवासी इंजीनियर 30 वर्षीय समीर अंसारी के रूप में हुई है। हादसा सुबह करीब आठ बजे प्रथम पाली के दौरान प्लांट के यूटिलिटी क्षेत्र में हुआ। दोनों को अस्पताल ले जाया गया, जहां चिकित्सकों ने उन्हें मृत घोषित कर दिया।

ईएसएल प्रबंधन ने हादसे पर दुख जताते हुए प्रभावित परिवारों को सहायता देने और घटना की स्वतंत्र जांच कराने का आश्वासन दिया है। फैक्ट्री इंस्पेक्टर शिवानंद लागुरी ने प्रबंधन की प्रभावित क्षेत्र की घेराबंदी कर असुरक्षित घोषित करने का निर्देश दिया है। उपायुक्त अजय नाथ झा ने चास एसडीएम प्रोजल ढांढा को जांच कर जल्द रिपोर्ट सौंपने का निर्देश दिया है।

असम के ग्वालपाड़ा में 12 बांग्लादेशी घुसपैठिए गिरफ्तार

- एक दलाल इन्हें मेघालय के जाफलांग के रास्ते भारत लेकर आया था
- मान्य तस्करी और घुसपैठ से जुड़ा हो सकता है यह मामला

गुवाहाटी, पृ2 : भारत में अवैध रूप से प्रवेश करने के आरोप में असम के ग्वालपाड़ा जिले से तीन बच्चों समेत 12 बांग्लादेशी नागरिकों को पकड़ा गया है। संदेह है कि मामला मानव तस्करी और अवैध घुसपैठ से जुड़ा हो सकता है।

इस बारे में मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने इंटरनेट मीडिया पोस्ट में कहा कि शुक्रवार रात एक स्थानीय नागरिक ने कुछ लोगों को रेते-बिलखते देखा। इसके बाद उन्हें हिरासत में लिया गया। इस समूह में नौ वयस्क और तीन बच्चे शामिल हैं।

पुलिस पूछताछ में उन्होंने बताया कि सबोर नाम का एक दलाल पांच अक्टूबर को उन्हें मेघालय के जाफलांग के रास्ते भारत लाया था। इसके बाद दलाल के साथ आए एक खासी समुदाय का व्यक्ति उन्हें गुवाहाटी ले गया, जहां उन्हें तीन दिन तक रखा गया। मुख्यमंत्री ने कहा कि दलाल कथित तौर पर समूह से 7,000 बांग्लादेशी टका और मोबाइल फोन छीनकर गुवाहाटी रेलवे स्टेशन के पास से फरार हो गया। बाद में यह समूह शुक्रवार रात बस से ग्वालपाड़ा पहुंचा, जहां स्थानीय नागरिक की नजर उन पर पड़ी। दलाल ने कथित तौर पर उन्हें गुवाहाटी की एक केफनी में काम कर रहे अन्य बांग्लादेशी नागरिकों के बीडियो दिखाए थे और नौकरी दिलाने का वादा किया था। उन्होंने बताया कि नौ वयस्कों के लिए कंपनी के मालिक से प्रति व्यक्ति 20 हजार रुपये लेने और बाद में इसे उनकी मजदूरी से काटने का सौदा तय हुआ था। इस कार्रवाई ने असम जैसे सीमावर्ती राज्य में घुसपैठ की समस्या को उजागर किया है। वहीं राज्य सरकार ने घुसपैठ के खिलाफ अपनी प्रतिबद्धता दर्शाई है।

पैंट के स्टीकर से सड़क हादसे में जान गंवाने वाले युवक की हुई पहचान

जास, मुरादाबाद : कभी-कभी एक छोटी-सी चीज भी पुलिस के लिए बड़ा मददगार बन जाती है। शनिवार शाम बस की चपेट में आकर जान गंवाने वाले युवक की पहचान कराने में उसकी पैंट पर चिपका स्टीकर अहम कड़ी बन गया। पुलिस ने गूगल मैप और इंटरनेट मीडिया की मदद से न सिर्फ युवक की पहचान की, बल्कि उसके परिवार तक भी पहुंच गई।

रेलवे स्टेशन के सामने बस की चपेट में आने से युवक की मौत हो गई थी। पुलिस को जेब से कोई पहचान पत्र तो नहीं मिला, लेकिन पैंट पर चिपका एक स्टीकर दिखाई दिया। उस पर न्यू नावल्टी टेलर, पथरदेवा, देवरिया लिखा था। पुलिस ने गूगल मैप की मदद से पथरदेवा स्थित उस टेलर की दुकान का पता लगाया और फोन नंबर हासिल किया। दुकानदार से संपर्क कर युवक का फोटो साझा किया। थाने के प्रभारी निरीक्षक से मृतक की तस्वीर इंटरनेट मीडिया समूहों में प्रसारित कराई गई।